बंगाल की लोक कथाएं

बंगाल की लोक कथाएं

आशिस सान्याल

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : श्रावण 1911 (अगस्त 1989)
पुनर्मुद्रण : श्रावण 1912 (अगस्त 1990)
पुनर्मुद्रण : श्रावण 1913 (अगस्त 1991)
पुनर्मुद्रण : अग्रहायण 1918 (नवम्बर 1996)

© प्रकाशन विभाग

ISBN : 81-230-0509-1

मूल्य : 20 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार,
पटियाला हाउस, नई दिल्ली - 110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र • प्रकाशन विभाग

- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली - 110001
- कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुम्बई - 400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता - 700069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, मद्रास - 600090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना - 800004
- निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम - 695001
- 27/6 राममोहन राय मार्ग, स्टेशन रोड, लखनऊ - 226001
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद - 500004

लेजर टाइपसैट : गौसिद्ध (दि लेजर पीपुल्स) सी-34, डी.डी.ए. शेड, ओखला, फेज-I नई दिल्ली-110020
प्रिंटर : इंडिया ऑफसेट प्रेस, मायापुरी फेज-I नई दिल्ली, - 110 064 द्वारा मुद्रित।

आमुख

लोक कथाएं, एक अर्थ में जातीय हृदय का दर्पण होती है। साधारण मनुष्यों का सुख-दुख, आशाओं-आकांक्षाओं, ध्यान एवं धारणाओं में विशेष सामंजस्य है—इसका प्रमाण लोक कथाएं ही हैं। युग-युगांतर के निरंतर प्रवाह में मानवता के उत्थान, पतन की विविध गति उत्तरोत्तर आज भी प्रभावित हो रही है।

'बंगाल की लोक कथाएं' वास्तव में बंग हृदय का ही प्रतिबिम्ब है। इसका उत्स समस्त बंगाल के मातृ-स्नेह में निहित है। रवीन्द्रनाथ के शब्दों में, "मातृ स्नेह ने, देश के राज-राजेश्वर के हृदय से दीनतम कृषक के मानस में भी उद्वेलित होकर मानवता को प्रशस्त किया है।" इन लोक कथाओं को पढ़कर समस्त बंगवासी हर्ष-विषाद, हास्य-रुदन एवं उल्लास से उत्प्रेरित होते रहे हैं। उनके मन को रस-सिक्त करने के लिए बंगाल की लोक कथाओं की परम्परा, मधुर मंदाकिनी बनकर उन्हें प्रोत्साहित करती रही है।

अन्यान्य भारतीय लोक कथाओं की भांति बंगाल की लोक कथाएं भी दादी एवं नानी के मुख से ही निःसृत होकर जन-जीवन को आहलादित करती रहीं हैं। इन बंग लोक कथाओं को संग्रह करने का प्रथम प्रयास, अंग्रेज मिशनरियों ने किया। उन लोगों ने कुछ लोक कथाओं का अंग्रेजी में अनुवाद कर प्रकाशित भी किया। किंतु इस दिशा में सर्वाधिक सक्रिय भूमिका निभाने का श्रेय एक बंगाली ईसाई पादरी रेवरेंड लाल बिहारी दे को है। 1883 में लंदन से प्रकाशित उनकी 'फोक लोर ऑफ बंगाल' (Folk Lore of Bengal) सम्भवतः बंगाल की लोक कथाओं का ही सार संकलन है। डी.एच. दामंत (D.H. Damant) रचित बंगाली फोक लोर फ्रोम दिनाजपुर (Bengal Folk Lore from Dinajpur); एडवर्ड ट्यूट डाल्टन (Edward Titute Dalton) रचित, 'डिस्क्रिप्टिव एंथलोजी ऑफ बंगाल' एवं विलियम मैकलॉक (William Mccullock) द्वारा 1912 में प्रकाशित 'बंगाली हाउस होल्ड टेल्स' इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। श्री काशीनाथ बनर्जी द्वारा 1905 में प्रकाशित 'पॉपुलर टेल्स ऑफ बंगाल'; शोभना देवी द्वारा 1915 में प्रकाशित 'द ओरियेंटल पर्लस'; फ्रांसीस ब्राडले ब्रिट द्वारा 1920 में प्रकाशित 'बंगाल फेयरी टेल्स' एवं डा. दिनेश चन्द्र सेन की 'फोक लिट्रेचर ऑफ बंगाल' इस प्रसंग में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त और भी अनेक लोक कथाओं के संकलन यत्र तत्र प्रकाशित हुए हैं। इस संदर्भ में सर्वप्रथम दक्षिणारंजन मित्र मजूमदार के 'ठाकुरमार-झली' ग्रंथ को ही प्रामाणिक माना है। अतः आज भी 'दक्षिणारंजन' की लोकप्रियता अक्षुण्ण है।

प्रस्तुत पुस्तक में संकलित कथाएं उल्लिखित पुस्तकों की सहायता से लिखी गई है। किन्तु कोई भी कथा केवल प्रतिलिपि नहीं है। इस पुस्तक के अनुवाद में मुझे राजनंदन और रीता मेहरोत्रा ने अपना सहयोग प्रदान किया, जिसके लिए मैं उनका आभारी हूं।

राष्ट्रीय संदर्भ में अपेक्षित सम्भावनाएं एवं उपलब्धियां बाल साहित्य के लिए भी विशेष प्रयोजनीय है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। जिनके लिए यह संकलन प्रस्तुत किया गया है यदि उन्हें इससे प्रेरणा और प्रमोदमय ज्ञानवर्धन हुआ, तो मैं अपना श्रम सफल समझूंगा।

'कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसति सम सब कहं हित होई।'

आशिस सान्याल

अनुक्रम

1.	उमनो और झुमनो	1
2.	फकीरचंद	7
3.	सात भाई चंपा	15
4.	शीत-बसंत	19
5.	डालिमकुमार	25

उमनो और झुमनो

दुर्गापुर नामक गांव में एक गरीब ब्राह्मण अपनी पत्नी और दो बेटियों के साथ रहता था। उसकी लड़कियों के नाम थे उमनो और झुमनो।

ब्राह्मण बहुत ही पेटू था। अच्छा-बुरा खाने के लिए वह हर समय मुंह खोले बैठा रहता था किंतु खाए कैसे। गरीब के घर में क्या चाहने से सब कुछ मिल जाता है? एक दिन ब्राह्मण को पीठा (मिठाई) खाने की बहुत इच्छा हुई। उसने अपनी यह इच्छा पत्नी को बताई। उसकी पत्नी ने कहा–

''यह तो मैं समझी पर कितने ही दिनों से पेट में अच्छा-बुरा क्या कुछ भी गया है। घर में चावल, गुड़, नारियल कुछ भी नहीं है। पीठा कैसे बनेगा, सुने तो?''

''यह सब मत सोचो।'' ब्राह्मण ने कहा, ''मैं तुरंत सभी चीजों का जुगाड़ कर लाता हूं।''

यह कहकर ब्राह्मण भिक्षा मांगने बाहर चला गया। सारा दिन घूम-फिरकर पीठा तैयार करने का सारा सामान लेकर घर लौटा, तब तक बहुत रात हो चुकी थी। ब्राह्मण के घर पहुंचने के साथ ही उसकी पत्नी पीठा बनाने के लिए बैठ गई। एक भी पीठा इधर-उधर न हो जाए, इसके लिए ब्राह्मण घुटने पर हाथ बांधे सामने ही बैठा रहा। उसके हाथ में रस्सी का एक गुच्छा था। एक-एक कर जैसे ही चूल्हे में छौंक की आवाज होती—ब्राह्मण भी एक-एक कर रस्सी में गांठ लगाता जाता। इस प्रकार वह चुपचाप सभी पीठों का हिसाब रख रहा था।

उस समय उमनो-झुमनो सो रही थीं। थोड़ी देर बाद पीठा तैयार होने की आवाज से उमनो की नींद टूट गई। वह दौड़कर मां के पास आई और पूछने लगी—"क्या बना रही हो मां? मुझे भी एक पीठा दे दो ना।"

ब्राह्मण की पत्नी जानती थी कि ब्राह्मण कितना पेटू है और कितना गुस्सैल भी। एक भी पीठा कम होने पर ब्राह्मण गुस्से में कुछ भी कर देगा। इसीलिए उसने उमनो से कहा, "यह सब तुम्हारे लिए नहीं है, बेटी?"

"क्यों?" उमनो ने जानना चाहा।

"इनमें से एक भी खाया तो तुम्हारे पिता तुम्हें जंगल भेज देंगे," मां ने बताया।

"भेजने दो," मचलते हुए उमनो ने कहा। मां के सामने अब कोई चारा न रहा। ब्राह्मण की पत्नी ने बेटी को एक पीठा देकर कहा, "बेटी, जल्दी-जल्दी खाकर सो जाना।"

उमनो पीठा खाकर सो गई। कुछ देर बाद झुमनो जाग गई। उसने भी मां के पास आकर कहा, "एक पीठा दो ना मां।"

मां ने उसे भी टालना चाहा तो झुमनो ने पूछा—"क्यों मां?"

"यह खाने से तुम्हारे पिता तुम्हें जंगल में भेज देंगे।" मां ने कहा।

"भेजने दो।" झुमनो ने उत्तर दिया।

अंत में उमनो की तरह झुमनो को भी एक पीठा देते हुए मां ने कहा, "बेटी, जल्दी-जल्दी खाकर सो जाना।"

पीठा खाकर झुमनो भी अपनी दीदी के पास आकर सो गई। इधर ब्राह्मण की पत्नी सारी रात पीठा बनाती रही। ब्राह्मण छिपकर बनाए जा रहे पीठों का सारा हिसाब रख रहा था। रात बीत गई, पीठा सेकना भी बंद हुआ।

पीठा सेकना समाप्त होते ही ब्राह्मण एक बड़ा-सा केले का पत्ता तोड़कर ले आया और बैठ गया। जप-तप कुछ भी नहीं किया। हाथ-मुंह तक उसने नहीं धोए, पत्नी को आवाज देते हुए कहा, "ओ सुनो, सब तैयार पीठे यहां रख दो।"

"देती हूं।" उसकी पत्नी ने उत्तर दिया।

"जल्दी करो।" ब्राह्मण ने उतावले होते हुए कहा।

ब्राह्मण की पत्नी ने सभी पीठे लाकर केले के पत्ते पर डाल दिए। ब्राह्मण एक-एक कर पीठे को खाता और रस्सी में लगाई गांठ को एक-एक कर खोलता जाता। इस तरह सब खा-पीकर ब्राह्मण ने देखा दो पीठे कम हैं। ब्राह्मण को बहुत गुस्सा आया। वह चिल्लाकर बोला—

"समझ गया तेरी चालाकी। तूने दो पीठे उन दो लड़कियों को खिलाएं हैं। वे दोनों मेरी जान लेकर ही रहेंगी।"

दूसरे दिन सुबह ब्राह्मण ने उमनो और झुमनो को बुलाकर कहा—"चलो, तुम्हारी बुआ के घर चलते हैं।" यह सुनते ही उमनो-झुमनो अवाक् रह गई। उन्होंने आश्चर्य से कहा—"हमारी बुआ है, यह तो हमें मालूम ही नहीं था।"

"है भई है। तुम लोगों को इतने दिनों तक नहीं बताया था अब जल्दी चलो।"

इससे पहले उमनो-झुमनो कहीं भी घूमने नहीं गई थीं। इसलिए बुआ के घर जाने की बात सुनकर बहुत खुश हुई। जल्दी-जल्दी दोनों तैयार हो गईं। इधर ब्राह्मण की पत्नी सब समझ रही थी। बुआ के घर का नाम लेकर वह ब्राह्मण अपनी

दोनों लड़कियों को जाने कहां ले जा रहा था लेकिन वह डर के कारण विरोध न कर सकी। उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। मन ही मन में दो पीठा देने के लिए अपने को ही कोसती रही।

उमनो-झुमनो को लेकर ब्राह्मण घर से निकल पड़ा। सारा दिन सड़क पर घूमता रहा। चलते-चलते वे लोग एक घने जंगल में पहुंच गए। दिन का उजाला धीरे-धीरे कम हो गया था। चारों तरफ अंधेरा फैल गया। उमनो-झुमनो ने पूछा—

"बुआ का घर और कितनी दूर है बाबा?"

"यही तो बस पहुंच गए," ब्राह्मण ने कहा।

"किन्तु हम लोग और चल नहीं पाएंगे," दोनों बहनो ने कहा।

"तो फिर एक काम करो। उस पेड़ के नीचे थोड़ा आराम कर लो, मेरी गोद में सिर रखकर थोड़ा सो लो। उसके बाद फिर चलेंगे।" ब्राह्मण बोला।

बाबा की बात को उमनो-झुमनो ने मान लिया। इतनी थकी थीं कि दोनों पिता की गोद में सिर रखते ही गहरी नींद सो गईं। ब्राह्मण ने देखा यही सुनहरा अवसर है। उसने उमनो-झुमनो का सिर गोद से उठाकर दो ईंटों पर रख दिया। उसके बाद जेब से एक आलते की शीशी निकाल कर आलता इधर-उधर छिड़क दिया। ब्राह्मण ने मन ही मन सोचा कि जब उमनो और झुमनो सोकर उठेंगी तो आलते के लाल रंग को खून समझ कर सोचेंगी कि कोई बाघ बाबा को मुंह में दबा कर ले गया है। इस प्रकार ब्राह्मण उन्हें जंगल में छोड़ कर चला आया।

कुछ देर बात झुमनो सोकर उठी और अपने बाबा को वहां न पाया तो घबरा कर सोचने लगी—"कहां है उसके बाबा? निश्चय ही पीठा खाने के अपराध में जंगल में छोड़कर चले गए हैं।" उसने आवाज देकर उमनो को जगाया। उमनो को विश्वास नहीं हुआ कि उसके बाबा इस तरह छोड़कर जा सकते हैं। वह चारों तरफ फैले आलते को खून समझ बैठी और बोली—"देखो ना, खून के दाग। निश्चय ही बाबा को बाघ उठाकर ले गया है।"

"फिर हम दोनों के सिर के नीचे ईंटे कहां से आई?" झुमनो ने पूछा। "हां यह तो है", उमनो ने कहा।

"तुम्हें याद नहीं पड़ रहा दीदी, हम दोनों बाबा की गोद में सिर रखकर सोए थे। यदि बाघ ही बाबा को उठाकर ले गया होता तो फिर हम दोनों के सिर दो ईंटों के ऊपर कौन रख गया। पीठा खाने के अपराध में ही बाबा हमें छोड़कर चले गए हैं।" झुमनो ने कहा।

झुमनो की बात उमनो को सच लगी लेकिन अब वे क्या करें। चारों ओर घना जंगल। जंगली जानवरों की चीत्कारें। कहां जाएंगी वे इस समय। झुमनो कुछ देर सोचती रही। उसने कहा, "देखो दीदी, इस समय रोने-धोने से कोई फायदा नहीं। पहले हमें सुरक्षित आश्रय की खोज करनी चाहिए। सामने एक विशाल बरगद का पेड़ दिखाई पड़ रहा है। उसकी ओट में रात आराम से बिताई जा सकती है।"

वे धीरे-धीरे बरगद के पेड़ की ओर बढ़ी। रात वहीं बिताई। भोर होते ही वे ओट से बाहर आ गईं। जंगल से बाहर निकलने के लिए वे तेजी से आगे बढ़ने लगीं। कुछ दूर जाने पर उनकी दृष्टि देवकन्याओं के एक समूह पर पड़ी, जो वहा पूजा कर रही थीं। उन्हें देख उमनो और झुमनो ने सोचा—दुर्गा-पूजा तो दो महीने पहले हो गई है। दिवाली का समय भी नहीं है। तो फिर ये पूजा किसकी कर रही हैं। तभी किसी की आवाज सुनाई दी—

"ये लोग सूर्य देवता 'ईतु' की पूजा कर रही है।"

"क्यों?" उन्होंने पूछा।

"दरिद्रता से मुक्ति पाने के लिए," उत्तर था। सुनते ही उमनो-झुमनो उस ओर बढ़ी। वहां उनके खड़े होते ही पूजा का कलश उलट गया। देवकन्याएं बोल उठीं—"कौन पापी है? तुम दोनों क्या चाहती हो?"

"हम लोग बहुत ही असहाय हैं। बाबा हमें कल रात जंगल में छोड़कर चले गए। घूमते-घूमते हम लोग यहां आ पहुंची हैं। हम पर दया करिए।" दोनों ने कहा।

उमनो-झुमनो की बात सुन देवकन्याओं का मन दया से भर गया। उन्होंने कहा—''जाओ, सामने उस तालाब में स्नान कर आओ, इसके बाद हमारे साथ 'ईतु' की पूजा करना।''

देवकन्याओं के कहे अनुसार उमनो-झुमनो तालाब में स्नान करने गई। उनके पैर रखते ही तालाब का सारा पानी सूख गया। उन दोनों ने लौटकर देवकन्याओं को सभी कुछ बताया। तब एक देवकन्या ने दूब की एक अंगूठी तैयार कर उन्हें दी और कहा—''बेटी, इसे तालाब में फेंकने के बाद उतरना। तब तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी।''

उमनो-झुमनो ने तालाब के निकट पहुंच उस दूब की अंगूठी को ताल में फेंक दिया। देखते-देखते तालाब पानी से भर गया और वे उसमें स्नान करके लौट आईं।

पूजा पाठ समाप्त होने पर देवकन्याओं ने उन दोनों को वर मांगना सिखाया। उमनो-झुमनो ने देवकन्याओं के कहे अनुसार ईतु देवता के सम्मुख अपनी मनोकामना व्यक्त की। प्रणाम करके ईतु का प्रसाद और कलश लेकर घर की ओर चल पड़ीं।

रास्ते में एक स्थान पर उन्होंने देखा कि एक छोटे से तालाब में बहुत-सा कर्मी शाक लगा है। इच्छा हुई कुछ शाक तोड़ लें। यह सोचकर उन दोनों ने जैसे ही तालाब में पैर बढ़ाए वैसे ही एक सोने का सिर उमनो के पैरों में उलझ गया। झुमनो ने उसे उठाकर कपड़ें में छिपा लिया। फिर वे दोनों घर की ओर चल पड़ीं।

उनके घर पहुंचने के बाद जैसे ही ब्राह्मण ने सोने का सिर उनके पास देखा, तो वह घबराकर चिल्लाते हुए बोला—

''बोलो तो, यह क्या है? यहां क्यों लेकर आई हो? क्या हमारे हाथों में हथकड़ी लगवाना है?''

''बाबा यह क्या कह रहे हो। हम तो शाक तोड़ने गई थी तो अचानक यह मिल गया।'' ''कहने से कुछ नहीं होता। तुरंत ही इसे फेंक दो'', कहकर ब्राह्मण ने खुद ही सोने के सिर को फेंक दिया। किंतु आश्चर्य, वह फिर अपने आप घर में लौट आया। ब्राह्मण तो अवाक् रह गया। ऐसी घटना तो उसने पहले कभी नहीं देखी थी।

तब उमनो-झुमनो ने जंगल में हुई देवकन्याओं से भेंट और ईतु पूजा की सारी बातें बताईं। ब्राह्मण की पत्नी ने सारी बातें सुनने के बाद बेटियों द्वारा लाए हुए ईतु पूजा के कलश को घर में स्थापित कर पूजा करने लगी। देखते-ही-देखते उनके घर में सब कुछ बदल गया। ब्राह्मण की पत्नी के चांद जैसा सुंदर पुत्र हुआ। ईतु भगवान की कृपा से उमनो का उस देश के राजा के साथ तथा झुमनो का वहां के मंत्री के साथ विवाह हो गया।

विवाह के बाद बेटियां ससुराल चली जाएंगी। यह सोचकर ब्राह्मण ने उनसे जानना चाहा—

''हां तो बेटी, तुम दोनों को और क्या चाहिए?'' उमनो ने कहा, ''बहुत दिनों से मागूर मछली का शोरबा नहीं खाया। खाने की खूब इच्छा हो रही है।''

''झुमनो, तुम्हें कुछ नहीं चाहिए।''

''आज अगहन का रविवार है। मैं ईतु-पूजा करूंगी। इसके लिए जो जरूरत का सामान है वही ला देना।'' झुमनो ने उत्तर दिया।

ब्राह्मण दोनों बेटियों की पसंद का सारा सामान लेकर आ गया। उसके बाद उमनो-झुमनो अपना-अपना काम निपटा, हाथी पर चढ़ अपने-अपने पति के घर की ओर रवाना हो गईं।

उमनो जिस रास्ते से गुजर रही थी, उस रास्ते के चारों ओर महामारी दिखाई दी। लोगों के घर-द्वार आग में जलकर गिरने लगे। चोरी-डकैती, खून, राहजनी चारों तरफ छा गई। और झुमनो जिस रास्ते से जा रही थी उसके चारों ओर आ... की आवाजें गूंज रही थीं। पेड़ फूलों से लदे थे। खेतों में सोने-सी फसलें लहलहा रही थी।

उमनो ने राजा के साथ राजबाड़ी में प्रवेश किया। राजा की मां द्वार पर ही सोने की चौकी, सोने की डलिया लेकर खड़ी थी। उमनो के सोने की चौकी पर पैर रखते ही सोना लोहा हो गया। बहू के सिर पर सोने की डलिया छुआते ही डलिया भी लोहे में बदल गई। सास ने बड़बड़ाते हुए कहा—''ऐसी कुलक्षणी बहू तो मैंने कभी नहीं देखी।''

इधर झुमनो के साथ अलग ही घटनाएं घटीं। राजा की तरह सम्पन्न स्थिति मंत्री की नहीं थी। बहू का स्वागत कर घर में प्रवेश कराने के लिए न तो सोने की चौकी थी और न ही सोने की डलिया। उसकी सास साधारण सामान ही लेकर खड़ी थी। किंतु आश्चर्य, झुमनो ने जैसे ही चौकी पर पैर रखा वैसे ही चौकी सोने की हो गई। डलिया भी सिर से छुआते ही सोने की हो गई। ऐसी अच्छी बहू पाकर सास की खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

बात यहीं पर समाप्त नहीं हुई। उमनो को रानी बनाकर लाने के बाद से ही जैसे राजा के बुरे दिन आ गए थे। आज हाथी मर रहा है, तो कल घुड़साल में घोड़ा। राज्य में चारों ओर महामारी फैली हुई है। सभी ने आपस में कहना शुरू किया—ऐसी कुलक्षणी बहू तो कभी देखी नहीं। एक-एक कर सबको खा जाएगी।

राजा के मन में खटका हुआ। उसके घर का यह हाल और मंत्री की दिन पर दिन उन्नति हो रही है। एक दिन राजा ने साफ-साफ मंत्री से पूछ ही लिया, ''यह सब कैसे हुआ भाई?''

मंत्री ने कहा, ''यह तो मैं भी नहीं समझ पा रहा हूं।''

''कैसे समझोगे? चाहे जो हो, कुलक्षणी बहू मुझे नहीं चाहिए। कल ही उसकी गर्दन कटवा देना।'' राजा ने कहा।

मंत्री संकट में पड़ गया। लेकिन राजा का आदेश टाल नहीं सकता था। लाचार होकर कोटाल को बुलाकर उसने राजा के आदेश का पालन करने को कहा। लेकिन कोटाल का मन भी ऐसे निष्ठुर काम में सहयोग देने का नहीं हुआ। किंतु राजा के आदेश का पालन तो करना ही था। उसने उमनो को झुमनो के घर के सामने छोड़ दिया और एक कुत्ते को काटकर उसका खून राजा को दिखा दिया।

झुमनो ने बड़े प्यार से उमनो को घर में बिठाया। उसके बाद उमनो से सारी बातें सुनी और सुनकर कहा—

''जानती हो दीदी, यह सब ईतु के कोप से हुआ है।'' झुमनो ने उमनो को अपने ही घर में छिपाकर रखा। उसके पति को भी इस बात का पता न चल सका।

इधर ईतु की कृपा से ब्राह्मण की गृहस्थी का रूप ही एकदम बदल गया। अब उसका पुत्र भी बड़ा हो गया था। ब्राह्मण ने अब अपने पुत्र का विवाह करने की सोची और एक दिन वह बारात लेकर अपने लड़के का विवाह करने चल पड़ा। कुछ दूर जाने पर लड़के ने कहा— ''ओह! जाति तो घर पर ही भूल आया हूं।''

''तो क्या हुआ? मैं अभी जाकर ले आता हूं। तुम लोग यहां प्रतीक्षा करो।''

ब्राह्मण दौड़ते-दौड़ते घर पहुंचा। ब्राह्मण की पत्नी उस समय दरवाजा बंद कर ईतु की पूजा कर रही थी। ब्राह्मण प्रतीक्षा नहीं कर सका। दरवाजा तोड़कर घर में घुसा। गुस्से से उसका शरीर थर-थर कांप रहा था। लाठी मारकर ईतु के कलश को चूर-चूर कर दिया। उसके बाद जाति लेकर तेजी से उस ओर चल पड़ा, जहां उसका बेटा और बाराती इंतजार कर रहे थे।

लेकिन यह क्या! कहां गए सब? बाजा-गाजा बाराती। केवल लड़का खड़ा-खड़ा रो रहा था। बहुत दुखी होकर ब्राह्मण घर लौट आया। और यह क्या, विशाल घर के स्थान पर पहले जैसा फूस घर। ब्राह्मण आश्चर्य में पड़ गया। ब्राह्मण की पत्नी ने रोते हुए कहा, ''ईतु द्वारा दी हुई धन-दौलत भी छीन गई।''

इस बार ब्राह्मण ने शांत भाव से कहा, ''जो होना था वह तो हो गया। अब सब कुछ भूलकर तुम फिर से ईतु की पूजा शुरू करो।''

''लेकिन कैसे पूजा करेंगे? कुछ भी तो घर में नहीं है।'' ब्राह्मण की पत्नी ने दुखी मन से कहा।

''चिंता मत करो। मैं सारी व्यवस्था करता हूं।'' ब्राह्मण ने उत्तर दिया।

ब्राह्मण सहायता मिल जाने की आशा से झुमनो के घर गया। वहां बेटी के ठाठ-बाट देखकर दंग रह गया। ब्राह्मण ने देखा दासियां सोने के घड़े से जल डालकर झुमनो को नहला रही हैं। ब्राह्मण ने दासियों को अपना परिचय दिया,

किंतु उसकी बात पर दासियों ने विश्वास नहीं किया। तब ब्राह्मण ने घास की एक अंगूठी बनाकर पास रखे एक घड़े में फेंक दी।

जब दासियां झुमनो के सिर पर जल उड़ेल रही थीं, तब एक घड़े से वही घास की अंगूठी गिर पड़ी। झुमनो ने पूछा—"यह क्या है? इसे किसने इसमें डाला है?"

"एक आदमी ने, वह कहते थे कि आपके पिता हैं।" दासी ने कहा।

"उनको जल्दी यहां ले आओ।" झुमनो ने आदेश दिया।

दासियां जल्दी से ब्राह्मण को घर के भीतर ले आईं। झुमनो ने अपने पिता का आदर-सत्कार किया। बाद में अपने बाबा को बहुत-सा रुपया, पैसा, सामान देकर विदा किया। लेकिन रास्ते में ही उस ब्राह्मण को कुछ डाकुओं ने लूट लिया। बेचारा ब्राह्मण खाली हाथ ही अपने घर लौट आया। अपने पति को खाली हाथ लौटता देख उसकी पत्नी बोली—

"कुछ भी नहीं दिया लड़की ने।"

"दिया तो था। लेकिन डकैतों ने सभी कुछ लूट लिया।" ब्राह्मण ने बताया।

"तो फिर!" उसकी पत्नी ने पूछा।

"इस बार तुम ही जाओ।" ब्राह्मण ने कहा।

ब्राह्मण के कहे अनुसार ब्राह्मण की पत्नी इस बार खुद ही झुमनो के घर गई। झुमनो ने मां का बहुत आदर-सत्कार किया।

मां ने आने का कारण बताया। इस पर झुमनो अपनी मां को सलाह देते हुए बोली— "मां अब तुम घर वापस मत जाओ यहीं पर इस बार ईतु पूजा पूरी करके जाना।" ब्राह्मण की पत्नी मान गई।

उसके बाद वही पूजा का दिन आया। झुमनो ने अपनी दीदी उमनो को उपवास व ईतु पूजा करने को कहा। अंत में रविवार के दिन झुमनो ने मां और दीदी को ईतु पूजा करके इच्छित वर मांगने को कहा।

ब्राह्मण की पत्नी ने कहा— "मेरा सभी कुछ पहले जैसा लौट आए।"

उमनो ने कहा— "मेरा घर जैसा था, फिर से वैसा ही हो जाए। मुझ पर पति की कृपा हो।"

देखते-देखते उमनो एवं ब्राह्मण की पत्नी फिर से पहले की तरह हो गई और उनके जीवन में किसी भी चीज का अभाव न रहा।

फकीरचंद

एक राज्य में वहां के राजपुत्र और मंत्रिपुत्र के बीच बहुत प्रेम था। वे साथ-साथ रहते-घूमते और साथ-साथ ही खुश थे।

एक बार उन दोनों ने विदेश घूमने का निश्चय किया। रुपये-पैसे का अभाव तो था नहीं। वे दोनों साहसी भी थे उन्होंने किसी को अपने साथ नहीं लिया और एक दिन वे दोनों घोड़ों पर सवार होकर निकल पड़े।

शाम होते-होते वे एक विशाल तालाब के किनारे जा पहुंचे। आसपास किसी गांव या बस्ती न देखकर उन्होंने रात वहीं बिताने का निश्चय किया।

दोनों घोड़ों को पेड़ से बांधकर वे पेड़ के ऊपर एक ऊंची डाल पर चढ़ गए। उन्होंने वहीं रात बिताने की व्यवस्था की। अंधकार होने लगा। सन्नाटे को चीरती जानवरों की आवाजें बढ़ने लगीं। कुछ समय बाद वे दोनों एक विचित्र दृश्य देखकर घबरा उठे।

तालाब के बीचों-बीच पानी में हलचल हुई। बहुत जोरों से फुंकारने की आवाज आने लगी। तभी एक विराट सांप अपना विशाल फन उठाए पानी से निकला। किनारे पर आकर फूं-फूं करने लगा। सांप के सिर पर एक अद्‍भुत मणि थी। उस मणि से चारों तरफ उज्वल प्रकाश फैल रहा था।

सांप ने सिर से मणि उतारकर मिट्‍टी के ढेर पर रख दी और फूं-फूं करते हुए भोजन की तलाश में उस पेड़ के नीचे आ पहुंचा, जिस पर वे दोनों मित्र बैठे थे। सांप ने दोनों घोड़ों को गिरा दिया। दोनों मित्र सोच रहे थे कि अब सांप उन तक भी पहुंच कर नीचे गिरा देगा, लेकिन सांप दूसरी ओर निकल गया। वे उत्सुकता से मणि को देखने लगे। उन्होंने पहले कभी मणि नहीं देखी थी, केवल कहानियों में ही सुना था। सांप के दूर जाते ही मंत्रिपुत्र की इच्छा मणि को उठाने की हुई। उसने सुन रखा था कि मणि से निकलते प्रकाश को ढकने का केवल एकमात्र उपाय गोबर या फिर घोड़े की लीद है। घोड़े की लीद पेड़ के नीचे ही थी। मंत्रिपुत्र जल्दी-जल्दी पेड़ से नीचे उतरा, उसने मणि को घोड़े की लीद में दबा दिया तथा फिर पेड़ पर चढ़कर बैठ गया। थोड़ी देर बाद सांप लौटा और मणि को खोजने लगा। मणि को वहां न पाकर व गुस्से में फन पटकने लगा। मणि न मिलने पर वह इतना दुखी हुआ कि कुछ समय बाद उसने प्राण ही त्याग दिए।

दूसरे दिन सुबह राजपुत्र और मंत्रिपुत्र पेड़ से उतरे। उतरते ही वे लीद में दबाई हुई मणि के पास दौड़ पड़े। मंत्रिपुत्र ने मणि को उठा लिया तथा उसे धोने के लिए तालाब की ओर बढ़ गया।

जैसे ही उसने मणि को पानी से धोया, वैसे ही उसमें से पहले की तरह अपूर्व प्रकाश निकलने लगा। उस प्रकाश से तालाब का तल तक प्रकाशित हो गया। उन दोनों ने देखा कि तालाब के तल में दीवारों से घिरा का विराट महल है।

मंत्रिपुत्र ने अपने मित्र से कहा— ''चलो, डुबकी लगाकर वहां चलें।''

''अगर कोई दैत्य-दानव वहां हुए तो?'' डरी हुई आवाज में राजपुत्र ने कहा।

लेकिन मंत्रिपुत्र बहुत साहसी था। वह कहने लगा—''चलते हैं। दैत्य-दानव होंगे तो देखा जाएगा।'' उन दोनों ने तालाब में डुबकी लगाई। मंत्रिपुत्र के हाथ में मणि थी। उसके प्रकाश से सभी जगमगा उठा। कुछ ही क्षण में वे तालाब के तल में बने राजमहल तक पहुंच गए।

राजमहल का मुख्य द्वार खुला था। उस खुले द्वार से उन लोगों ने प्रवेश किया। लेकिन महल में कोई दिखाई नहीं दिया। महल के चारों तरफ बगीचा था। बगीचे में तरह-तरह के फूल खिले थे। महल की दीवारें सोने की बनी थीं जिसमें हीरे जड़े हुए थे। महल के अंदर रखी सभी वस्तुएं भी सोने की थीं। परंतु उन्हें कहीं भी कोई आदमी न दिखाई दिया। ऐसा लग रहा था जैसे सब लोग उस महल को छोड़कर चले गए हों।

घूमते-घूमते वे एक कमरे में पहुंचे। वहां सोने के पलंग पर एक सोई हुई लड़की को देखकर आश्चर्यचकित हो गए। वह अति सुंदर थी। दूध के समान श्वेतवर्णी थी। आयु भी कोई सोलह साल की होगी। राजपुत्र और मंत्रिपुत्र उस लड़की को आश्चर्य से देख रहे थे। कुछ देर बाद लड़की उठ बैठी, उसने उन्हें आंखे मलते हुए देखा। उसने घबराते हुए कहा—''कैसा सर्वनाश! तुम लोग किस तरह यहां आए? जानते नहीं, यहां एक विशालकाय सांप रहता है। वापस आते ही वह तुम्हें देखते ही खा जाएगा।''

"जानते हैं।" उन्होंने उत्तर दिया।

"विश्वास नहीं हो रहा?" बोलते-बोलते लड़की बिस्तर से उठ बैठी। उसने बताया—"उस सांप ने मेरे पिता को खाया, मेरी मां को खाया, मेरे भाइयों को खाया, नौकर-सिपाही, आत्मीय, स्वजन सभी को खा गया है। केवल मेरे प्राणों को ही छोड़ रखा है। तुम दोनों तुरंत भाग जाओ। नहीं तो...नहीं तो तुम्हें भी खा जाएगा।"

"लेकिन अब ऐसा नहीं होगा। क्योंकि वह सांप ही नहीं रहा।" मंत्रिपुत्र ने उत्तर दिया। यह सुनकर लड़की की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। सांप से बचाने के लिए वह उन्हें बार-बार धन्यवाद देने लगी। बाद में अनुनय भरे शब्दों में कहने लगी—

"तुम लोगों ने मुझे बचाया है। लेकिन मुझे अकेले इस महल में छोड़कर मत चले जाना।"

"ठीक है।" उन्होंने लड़की को आश्वासन देते हुए कहा।

लड़की दिखने में जितनी सुंदर थी स्वभाव में भी उतनी ही मधुर। कुछ समय बाद राजपुत्र ने उससे विवाह कर लिया। अब राजपुत्र ने स्वदेश लौटने की सोची। लेकिन राजपुत्र पत्नी को लेकर अपने देश लौटने के लिए शाही ठाठ-बाट चाहता था। मंत्रिपुत्र ने राजपुत्र से कहा—"मैं पहले जाकर राजा को सब कुछ बता दूंगा। उसके बाद हाथी-घोड़े, प्रजा को साथ लेकर आऊंगा और तुम दोनों को यहां से ले जाऊंगा।" राजपुत्र यह सुनकर आश्वस्त हो गया।

वायदे के मुताबिक मंत्रिपुत्र जाने के लिए तैयार हो गया। लेकिन ऊपर जाने के लिए सांप के सिर की मणि की जरूरत थी। अतः दोनों ने निश्चय किया कि मणि लेकर वे दोनों ही पानी के ऊपर जाएंगे। उसके बाद राजपुत्र को मणि देकर मंत्रिपुत्र स्वदेश की ओर चल देगा और राजपुत्र जल के तल में स्थित राजमहल में वापस लौट आएगा। जल से बाहर आकर मंत्रिपुत्र ने राजपुत्र को सब कुछ बता दिया कि वह कब लौटकर आएगा। राजपुत्र मणि लेकर अपनी पत्नी के पास वापस आ गया।

इधर मंत्रिपुत्र सीधे रास्ते से न जाकर दूसरे रास्ते से अपने देश को चल पड़ा। परिणामस्वरूप वह निर्दिष्ट समय पर देश नहीं पहुंच सका। इसीलिए हाथी-घोड़े, प्रजा को साथ लेकर लौटने में भी उसे देरी हो गई। उधर राजपुत्र उस निर्जन महल में अधीर मन से मंत्रिपुत्र की प्रतीक्षा करता रहा। एक दिन की बात है। राजपुत्र दोपहर को खाना खाकर सो गया। लड़की वहीं चुपचाप पलंग के पास बैठी थी। अचानक उसकी नजर मणि पर पड़ी। उसने मन ही मन सोचा—पानी के बाहर क्या है, कभी देखा नहीं, अतः मणि लेकर कुछ घूम आए और राजपुत्र के उठने से पहले ही वापस लौट आएगी। लड़की मणि हाथ में लेकर पानी से ऊपर आ गई। चारों ओर का वातावरण देखकर उसे प्रसन्नता हुई। तालाब के घाट की सीढ़ियों पर बैठकर उसने स्नान किया एवं किनारे पर कुछ देर इधर-उधर घूमती रही। उसके बाद वह अपने घर लौट आई। किसी ने भी उसे नहीं देखा। दूसरे दिन भी दोपहर के समय स्वामी को अकेला छोड़कर ऊपर आकर घूम-फिरकर वापस लौट गई। धीरे-धीरे उसका साहस बढ़ता गया। प्रतिदिन वह दोपहर को राजपुत्र के सो जाने के बाद ऊपर आने लगी।

एक दिन जिस राज्य की सीमा में तालाब था, उसी राज्य का राजा अपने पुत्र के साथ वहां शिकार के लिए आया। तालाब के पास ही अपना डेरा डाला। दोपहर को सभी खाने-पीने में व्यस्त थे। राजपुत्र घूमते-घूमते उसी तालाब के किनारे आकर खड़ा हुआ। एक बुढ़िया भी उसी समय वहीं आस-पास सूखी लकड़ियां बीन रही थी, वह लड़की भी प्रतिदिन जैसे मणि हाथ में लेकर ऊपर आई हुई थी और तालाब के घाट पर बैठी थी। अचानक उसकी नज़र उन दोनों पर पड़ी। यह देख उसने घबराकर तालाब में डुबकी लगाई और सीधे राजमहल पहुंचकर सांस ली। इधर वह राजपुत्र लड़की को देखकर मुग्ध हो उठा। ऐसी रूपवती कन्या उसने पहले कभी नहीं देखी थी। एक क्षण को दिखकर ही अदृश्य हो गई थी। वह राजपुत्र काठ की तरह स्थिर खड़ा रह गया और सोचने लगा कि क्या यह अच्छा हो यदि वह रूपवती कन्या

एक बार और दिखाई दे जाए, लेकिन उसकी यह कामना पूरी न हुई। वह पागल-सा हो गया। बीच-बीच में कहता जाता "अभी थी, अभी नहीं।"

कोई कुछ भी समझ नहीं पा रहा था। राजपुत्र वहां से लौटना ही नहीं चाहता था। बहुत मुश्किल से अनुचर उसे राजमहल में लेकर आए।

राजा ने अपने देश के अनेक वैद्यों को बुलवाया। बहुत इलाज करवाया लेकिन कोई फायदा न हुआ। राजपुत्र के मुंह पर केवल एक ही बात थी—"अभी थी, अभी नहीं।"

राजा बहुत उदास था, उसने घोषणा की, यदि कोई राजपुत्र को ठीक कर सकेगा तो वह अपने लड़के के साथ उसकी लड़की का विवाह कर देगा और राजपाट भी देगा। लेकिन कोई भी न आया। राजा बहुत हताश हो चुका था।

एक दिन एक बुढ़िया ने आकर कहा, "महाराज मैं आपके लड़के को ठीक कर सकती हूं।"

"तुम!" राजा ने आश्चर्य से कहा।"

"हां महाराज, मैं।" बुढ़िया ने उत्तर दिया।

"देश के प्रसिद्ध वैद्य भी कुछ नहीं कर सके और तुम कह रही हो ठीक कर दोगी। तुम जानती हो राजपुत्र के पागल होने का क्या कारण है?" राजा ने पूछा।

"जानती हूं महाराज, लेकिन बताऊंगी नहीं। पहले ठीक कर दूं उसके बाद ही बताऊंगी।" बुढ़िया ने कहा।

"ठीक है चेष्टा करके देखो। कितने दिन लगेंगे?" राजा ने पूछा।

"वह अभी नहीं बता सकूंगी महाराज! यदि आपका सहयोग मिले तो आपका लड़का जल्दी ही ठीक हो जाएगा।"

"मेरा सहयोग", राजा ने उत्सुकता से पूछा।

"हां, महाराज आपका सहयोग।" बुढ़िया ने कहा।

"बोलो कैसा सहयोग चाहती हो?" राजा ने फिर पूछा।

"जिस तालाब के किनारे राजपुत्र की बीमारी शुरू हुई थी। उसी जगह मेरे लिए एक छोटी झोंपड़ी बनाकर देनी होगी। मेरी झोंपड़ी से कोई सौ कदम की दूरी पर आपके अनुचर छिपकर रहेंगे तथा मेरे निर्देशानुसार काम करेंगे।" बुढ़िया ने कहा।

राजा ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि वे बुढ़िया के कहे अनुसार कार्य करें।

बुढ़िया ने फिर कहा—"लेकिन महाराज आप अपने वचन को मत भूल जाना। मैं तो आपके लड़के से विवाह नहीं कर सकूंगी किंतु उसके बदले आपको अपनी लड़की का हाथ मेरे लड़के फकीरचंद के हाथ में देना होगा।"

उस बुढ़िया का एक बेटा था फकीर। इसीलिए उस बुढ़िया को सभी फकीर की मां कहकर बुलाते थे। फकीर था एकदम पागल। बीच-बीच में घर से भाग जाता था। लंगोटी पहने रहता था। सारे शरीर पर छाई (राख) मली रहती थी। जब घर वापस आता तब दरवाजे पर खड़ी मां के सामने उछल-उछलकर नाचता। उसकी बात भी समझ में नहीं आती थी।

राजा के आदेश से तालाब के किनारे एक ही दिन में झोंपड़ी तैयार हो गई। सौ हाथ की दूरी पर अनुचरों के रहने की व्यवस्था भी कर दी गई। अनुचरों को यह भी आदेश दिया गया कि जब तक बुढ़िया न बुलाए, तालाब के किनारे कोई नहीं आए-जाए। स्वयं बुढ़िया भी पहरे पर बैठ गई।

इधर तालाब के तलीय राजमहल में राजपुत्र अपनी पत्नी के साथ मंत्रिपुत्र की प्रतीक्षा कर रहा था, लेकिन मंत्रिपुत्र का कुछ पता नहीं था। लड़की ने उस दिन घटी घटना के बाद निश्चय किया कि अब वह पानी से बाहर नहीं निकलेगी। लेकिन उस दिन उसके साथ क्या होने वाला था कौन जानता था। दोपहर के खाने के बाद जब राजपुत्र सोने के पलंग पर सो रहा था, लड़की हाथ में मणि लेकर फिर पानी के बाहर आई। इधर-उधर देखने के बाद पक्के घाट पर बैठ गई।

बुढ़िया इसी अवसर की प्रतीक्षा में थी। "बेटी, मेरी रूप की रानी। लाओं मैं तुम्हें नहला देती हूं।" लड़की ने बुढ़िया को देखकर कोई आपत्ति नहीं की। बुढ़िया जल्दी से उसके पास जाकर बैठ गई। अचानक मणि को उसके हाथ में देखकर बोली—"अरे उसे हाथ में क्यों ले रखा है? कभी भी पानी में गिर जाएगी। घाट के ऊपर ठीक से रख दो।" बुढ़िया ने समय पाकर मणि को अंटी में छिपा लिया और उसके बाद राजा के अनुचरों को झट इशारा कर दिया। अनुचरों ने लड़की को पकड़ लिया और राजदरबार में ले गए।

लड़की को देखते ही राजपुत्र बोल उठा, "मिल गई, मिल गई, वह तो मिल गई।"

राजपुत्र का पागलपन दूर हो गया। राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। उन्होंने राजपुत्र का विवाह उस लड़की के साथ करना चाहा, किंतु लड़की ने बताया—"तालाब के तलीय महल में मेरे पति हैं। मैंने व्रत लिया है कि एक वर्ष तक किसी दूसरे पुरुष का मुंह भी नहीं देखूंगी। इसलिए अभी विवाह कैसे सम्भव होगा?" सुनकर राजा बहुत उदास हो गया। पर और कोई उपाय न देखकर राजा एक वर्ष तक प्रतीक्षा करने की बात को मान गया।

उधर मंत्रिपुत्र ने सारी व्यवस्था की और उसी तालाब के किनारे हाथी, घोड़ों, अनुचरों को साथ लेकर वापस लौट आया। तालाब के किनारे आम के बगीचे में तम्बू ताना गया और तालाब की ओर मंत्रिपुत्र एकटक देखता रहा।

निर्दिष्ट समय तो बीत ही गया था किंतु मंत्रिपुत्र को आशा थी कि राजपुत्र अवश्य मिल जाएगा। किंतु राजपुत्र और उसकी सुंदर पत्नी दिखाई नहीं दी। मंत्रिपुत्र ने सोचा निश्चय ही कोई दुर्घटना हुई है। लेकिन पातालपुरी तक किस तरह पहुंचा जाए? वह जानता था कि सांप के सिर की मणि के बिना वहां तक पहुंच पाना असम्भव है।

इधर व्रत की अवधि पूरी होने वाली थी। राजा ने अपने पुत्र के साथ उस लड़की के विवाह की तैयारियां शुरू कर दीं। हलवाइयों ने मिठाइयां बनाना शुरू कर दी। नगर में घर-द्वार सजाए जाने लगे। सिंह द्वार के ऊपर नौबत बैठी। राजमहल में शहनाई बजने लगी। मंत्रिपुत्र ने पास के नगर से शहनाई की गूंज को सुना। एक राहगीर से पूछने पर उसने मंत्रिपुत्र को बताया कि—"एक जलकन्या के साथ इस देश के राजपुत्र का विवाह होने जा रहा है। उसी की तैयारियां चल रही हैं।" मंत्रिपुत्र सारी स्थिति समझ गया। वह सोचने लगा कि सबसे पहले नगर में जाकर सभी बातों को ठीक-ठीक जानना होगा। वह नगर की ओर चल पड़ा। वहां जाकर उसने एक ब्राह्मण के घर में शरण ली।

ब्राह्मण ने उसका आदर-सत्कार किया तथा उसे भरपेट भोजन कराया। विश्राम के बाद मंत्रिपुत्र ने ब्राह्मण से पूछा—

"ब्राह्मण देवता, नगर में इतनी तैयारियां क्यों की जा रही है?"

"लगता है तुम यहां नए आए हो। नगर के निकट वन में जो एक तालाब है वहां से एक अपूर्व सुंदरी जलकन्या को पकड़कर लाया गया है। कल उसका विवाह राजा के लड़के के साथ किया जा रहा है। इसीलिए नगर में इतनी रौनक है।"

'ऐसी अद्भुत बात तो पहले कभी सुनी नहीं, वास्तव में मैं बहुत दूर रहता हूं, कृपया पूरी बात बताइए," मंत्रिपुत्र ने कहा। ब्राह्मण ने सारी बातें बताईं कि राजा शिकार पर गया था। वहां राजा का पुत्र पागल हो गया और उसे ठीक करने के लिए बुढ़िया ने किस तरह उस जलकन्या को पकड़ा।

"बुढ़िया को महाराज ने जो वचन दिया था क्या वह पूरा किया?" मंत्रिपुत्र ने जानना चाहा।

"वह तो अभी तक पूरा नहीं किया जा सका क्योंकि बुढ़िया फकीरचंद को नहीं खोज पा रही है। वह गायब हो गया है। बुढ़िया कहती है कि अब उसके आने का समय हुआ है।"

"वह देखने में कैसा है?" मंत्रिपुत्र ने पूछा।

"शक्ल-सूरत तो तुम्हारी तरह ही होगी। लंगोटी पहने रहता है। सारे बदन पर छाई लगाए रहता है। हाथ में पेड़ की डाल लेकर मां के घर के दरवाजे के सामने उछल-उछल कर नाचता है और कहता रहता है—"यह नहीं होगा—नहीं होगा।" यह सब सुनने के पश्चात मंत्रिपुत्र ने मन ही मन योजना बनाई।

मंत्रिपुत्र ब्राह्मण से विदा लेकर नगर के बाहर आ गया। उसके बाद फकीरचंद की तरह वेष बनाकर नगर में पुनः लौट आया। हाथ में पेड़ की डाल लेकर बुढ़िया के घर के सामने उछल-उछलकर नाचने लगा। फकीरचंद की आवाज सुनकर बुढ़िया बहुत खुश हुई। वह पहचान नहीं सकी कि मंत्रिपुत्र फकीरचंद के वेष में आया है। खुशी से कह उठी—''लगता है, भगवान ने मेरी सुन ली। बेटा, अब मुझे छोड़कर मत जाना।''

''नहीं-नहीं-नहीं, यह नहीं होगा, यह नहीं होगा।'' नकली फकीरचंद कह उठा।

''मेरे साथ रहो, राजा की लड़की के साथ तुम्हारा विवाह करूंगी।'' बुढ़िया ने कहा।

इस बार नकली फकीरचंद शादी के लिए राजी हो गया।

''तालाब से निकली जलकन्या को पकड़कर लाई हूं, देखने चलोगे।'' बुढ़िया ने पूछा।

''जाऊंगा, जाऊंगा।'' फकीरचंद ने नाचते-नाचते उत्तर दिया।

''मणि देखोगे? सांप के सिर की मणि।'' बुढ़िया ने फिर कहा।

''देखूंगा, देखूंगा।'' नकली फकीरचंद ने उत्तर दिया।

बुढ़िया ने अंटी से मणि जैसे ही निकाली, नकली फकीरचंद ने उसे लेकर अपनी अंटी में रख लिया। बुढ़िया तो बेहद खुश थी इस ओर उसने ध्यान भी नहीं दिया। उसके बाद वह फकीरचंद को राजमहल में ले गई। जिस कमरे में जलकन्या थी, बुढ़िया ने उसे उसी कमरे में ही ले जाकर बिठा दिया। शाम हो जाने पर बुढ़िया ने फकीरचंद को चलने के लिए कहा, लेकिन फकीरचंद नहीं उठा। बुढ़िया बहुत चिल्लाई। लेकिन फकीरचंद भी जिद्दी था। अंत में हारकर बुढ़िया फकीरचंद को छोड़कर चली गई और पहरा देने वाले को कह गई—

''पागल है। थोड़ी देख-भाल रखना।''

रात के समय जब राजमहल में सब सो गए। तब लड़की के पास जाकर मंत्रिपुत्र ने अपना परिचय दिया। लड़की ने रोते-रोते कहा—''जैसे भी हो सके मेरा उद्धार करो। तुम्हारे जैसा हितैषी और कौन होगा।'' मंत्रिपुत्र ने लड़की को आश्वासन देते हुए कहा, ''इसलिए तो इस तरह आया हूं मैं जैसा कहूंगा ठीक वैसा ही करना। आज रात को ही यहां से भागना होगा।''

इसके बाद नकली फकीरचंद बार-बार बाहर आकर उछल-उछलकर नाचते-नाचते खिड़की से अंदर बाहर आने लगा। पहले तो पहरेदारों ने उस पर ध्यान दिया। फिर बाद में उसे पागल समझकर कहने लगे—''लगता है सारी रात पागल इसी तरह करेगा। कभी खिड़की से बाहर जाएगा, कभी अंदर आएगा। उसे ऐसा ही करने दो तब तक हम थोड़ा सो लें।''

मंत्रिपुत्र के लिए यह एक सुअवसर था। वह जलकन्या को पीठ से बांध कर खिड़की से भाग गया। पहले वे उसी तालाब के किनारे जा पहुंचे। राजपुत्र को तलीय राजमहल से अपने साथ लेकर तेजी से अपने देश की ओर चल पड़े। हाथी-घोड़े सभी पहले ही लौटा दिए थे। इसलिए अब उन्हें पैदल ही लौटना पड़ रहा था। पहाड़, जंगल, नदी आदि को पार करते हुए वे देश की ओर बढ़ते गए। कितने ही दिन इसी तरह बीत गए। कहीं कोई आबादी नहीं दिखाई दी। एक विशाल बरगद का पेड़ दिखाई दिया। उस रात सबने पेड़ के नीचे ही विश्राम किया। थके होने के कारण थोड़ी देर में ही राजपुत्र और उसकी पत्नी गहरी नींद में डूब गए। लेकिन मंत्रिपुत्र पहरा देने के लिए जगा रहा।

उस पेड़ पर एक चिड़ा और एक चिड़िया रहते थे। गहरी रात में मंत्रिपुत्र ने चिड़ा-चिड़िया को आपस में बात करते सुना—''मंत्रिपुत्र ने इतना करके राजपुत्र और उसकी पत्नी को बचाया लेकिन क्या वे सकुशल अपने देश पहुंच सकेंगे?''

चिड़ा ने कहा—''मैं तो आने वाली भीषण विपत्ति देख रहा हूं। राजपुत्र को लेने के लिए राजा हाथी भेजेगा किंतु राजपुत्र उस हाथी पर चढ़ते ही गिरकर मर जाएगा।''

''अगर कोई राजपुत्र को हाथी की पीठ पर चढ़ने ही न दे तो?'' चिड़िया ने पूछा।

''तो फिर वह बच जाएगा। लेकिन इससे होनी टलेगी नहीं। राजबाड़ी के सिंह द्वार से प्रवेश करते समय सिंह द्वार के टूटने से राजपुत्र मर जाएगा,'' चिड़े ने कहा।

''यदि कोई सिंह द्वार पहले से ही तोड़ दे तो?'' चिड़िया ने पूछा।

चिड़े ने कहा—''तो फिर बच जाएगा। लेकिन उससे भी होनी टलेगी नहीं। राजपुत्र के बहुत दिनों बाद देवकन्या जैसी पत्नी लेकर लौटने के कारण राजा सहभोज आयोजन करेंगे। राजपुत्र की पत्तल में मछली का सिर परोसा जाएगा, उसे खाते ही गले में अटक जाने से राजपुत्र की मृत्यु हो जाएगी।''

''यदि कोई वह सिर हटा दे तो?'' चिड़िया ने कहा।

''तब बच जाएगा। लेकिन उस पर भी विपत्ति नहीं टलेगी। रात में जब राजपुत्र सोने के पलंग पर सोएगा, तब विषधर सांप राजपुत्र को डस लेगा'' चिड़े ने फिर दोहराया।

''किंतु यदि कोई छिपकर सांप के टुकड़े-टुकड़े कर दे तो?'' चिड़िया ने पूछा।

''फिर तो बच जाएगा राजपुत्र। किंतु जो मनुष्य सांप को मारेगा, वह अगर आज की यह बाते राजपुत्र को बता देगा, तो वह स्वयं सफेद पत्थर की मूर्ति बन जाएगा।'' चिड़े ने कहा।

''इससे बचने का कोई रास्ता है?'' चिड़िया ने पूछा।

''है! अगर राजपुत्र अपनी पहली संतान को काटकर, उसके रक्त को मूर्ति पर लगाया जाए तो फिर वह जीवित हो उठेगा।'' चिड़े ने बतलाया। सुबह हो गई थी। आकाश में सूर्य निकल आया था। मंत्रिपुत्र ने चिड़ा और चिड़िया की और बातचीत नहीं सुनी। राजपुत्र, उसकी पत्नी और मंत्रिपुत्र ने फिर चलना शुरू किया। कुछ दूर पहुंचते ही उन्होंने देखा कि उन्हें लिवा ले जाने के लिए राजा ने हाथी, घोड़े और पालकी भेजी है। राजपुत्र हाथी पर बैठने ही वाला था कि उसी समय मंत्रिपुत्र ने उसे हटाते हुए कहा—

''मैं हाथी पर जाऊंगा। तुम घोड़े पर चढ़ो।''

राजपुत्र कुछ असंतुष्ट हुआ, लेकिन उसने कुछ कहा नहीं। मन ही मन उसने सोचा कि ''मंत्रिपुत्र के कारण ही तो मैं पत्नी को लेकर घर लौट रहा हूं।'' नगर में प्रवेश करने के बाद राजमहल का सुंदर सजा हुआ सिंह द्वार देखा। लेकिन मंत्रिपुत्र ने पहले ही जाकर सिंह द्वार को तोड़ दिया। इस पर भी राजपुत्र ने कुछ नहीं कहा किंतु उसका मन बहुत विचलित हुआ। खाने के समय राजपुत्र की पत्तल में मछली का सिर परोसा गया, मंत्रिपुत्र ने झट से उठाकर मुंह में रख लिया।

भोजन के बाद मंत्रिपुत्र ने राजपुत्र से कहा—''अब अनुमति दो। मैं घर जाता हूं।'' मंत्रिपुत्र के व्यवहार से राजपुत्र इतना खिन्न हो उठा था कि उसने जरा भी आपत्ति नहीं की। लेकिन मंत्रिपुत्र घर नहीं गया। वह छिपकर राजपुत्र के पलंग के नीचे प्रतीक्षा करने लगा। राजपुत्र और उसकी पत्नी के सो जाने के बाद आधी रात को उसने देखा कि एक फणीधर नाग कमरे में आ रहा है। सांप जैसे ही राजपुत्र को काटने बढ़ा वैसे ही मंत्रिपुत्र ने तलवार से सांप के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और राजकन्या के पानी पीने के बर्तन में छुपाने लगा तो बर्तन लुढ़क गया। आवाज सुनकर राजकन्या उठ बैठी। मंत्रिपुत्र को इस तरह शयन कक्ष में देख चिल्ला उठी। राजपुत्र भी जाग गया। पलंग के पास रखी तलवार से मंत्रिपुत्र को मारने के लिए जैसे ही बढ़ा मंत्रिपुत्र बोल उठा—''विश्वास करना बंधु। तुम्हें बचाने के लिए ही मैंने यह सब किया है।''

''अनर्गल बातें मर करो। पातालपुरी को छोड़ने के बाद से ही मैं तुम्हारें विचित्र आचरण को देख रहा हूं।'' राजपुत्र क्रोधित होकर बोला।

मंत्रिपुत्र ने बड़े ही शांत स्वर में उत्तर दिया—''तुम्हें बचाने के लिए ही यह सब किया है। इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था मेरे पास।''

''क्यों नही बता रहे सारी बात? किसने तुम्हारा मुंह बंद कर रखा है?'' राजपुत्र ने कहा।

''मेरे भाग्य ने। सब बताने से मैं पत्थर की मूर्ति बन जाऊंगा। यदि मुझे बचाना चाहो तो तुम्हें अपनी पहली संतान की बलि चढ़ा उसके रक्त से मुझे नहलाना होगा।'' मंत्रिपुत्र ने कहा।

इतना सुनकर भी राजपुत्र का क्रोध शांत नहीं हुआ। उसने फिर पूछा, ''मुझे बेवकूफ मत समझो, घुमा-फिराकर बातें मत करो। इससे कुछ न होगा। सच क्या है बताना ही होगा।''

मंत्रिपुत्र ने तब दुखी होकर चिड़ा और चिड़िया से सुनी बातें एक-एक करके बताई। मंत्रिपुत्र जैसे-जैसे एक-एक घटना बताता जाता, वैसे-वैसे उसके शरीर का एक-एक अंग सफेद पत्थर का होने लगा। शेष घटना के बताते ही वह एक सफेद पत्थर की मूर्ति हो गया। तब राजपुत्र को बहुत पछतावा हुआ और अपने मित्र के लिए कुछ भी करने को तैयार हो गया।

कुछ समय बाद राजपुत्र के घर एक सुंदर पुत्र हुआ। लेकिन घर के कोने में रखी सफेद पत्थर की मूर्ति की ओर देखते ही राजपुत्र और उसकी पत्नी का हृदय हाहाकार कर उठता। राजपुत्र और उसकी पत्नी ने निश्चय कर लिया कि अपने मित्र के लिए वह अपने पुत्र का बलिदान कर देंगे। संतान के रक्त से सफेद पत्थर की प्रतिमा को धोते ही मंत्रिपुत्र जीवित हो उठा। राजपुत्र ने मंत्रिपुत्र को हृदय से लगा लिया। लेकिन राजपुत्र के बेटे के कटे शरीर को देखकर मंत्रिपुत्र का हृदय फटने लगा। अब क्या किया जाए, मन ही मन मंत्रिपुत्र सोचने लगा। उसे अपनी पत्नी की बात ध्यान में आई। उसने काली की साधना कर सिद्धियां प्राप्त की थीं। मंत्रिपुत्र राजपुत्र के कटे हुए लड़के को उसके पास ले गया। काली के आशीर्वाद से मंत्रिपुत्र की पत्नी उसके प्राण लौटा लाई।

पुत्र को पुनः पाकर राजपुत्र और उसकी पत्नी की खुशी का ठिकाना न रहा। इसके बाद उन सभी के दिन सुख से बीतने लगे।

सात भाई चंपा

एक राजा था। उसकी सात रानियां थीं। छोटी रानी का नाम सुलता था। वह रूप और गुण दोनों की धनी थी। इसीलिए राजा छोटी रानी को ही सबसे ज्यादा चाहता था। अन्य रानियां इसी वजय से सुलता रानी से ईर्ष्या करती थीं तथा सोचती रहती थीं कि किस तरह राजा के मन में छोटी रानी के प्रति घृणा उत्पन्न की जाए। वे छोटी रानी को नीचा दिखाना चाहती थी।

सुलता रानी को यह सब सहन करने की आदत-सी पड़ चुकी थी। अन्य रानियों के हंसी-मजाक पर वह ज्यादा ध्यान नहीं देती थी। हमेशा उनके साथ अच्छा व्यवहार करती। वह उनसे किसी भी प्रकार का वाद-विवाद नहीं करती थी।

सातों रानियों के कोई भी संतान नहीं थी। राजा इस बात से ही उदास रहता था कि उसके बाद इतने बड़े राज्य का शासन भार कौन सम्भालेगा। राजा को दुखी देखकर सभी रानियां बहुत दुखी रहती थीं तथा भगवान से राजा के इस दुख को दूर करने की प्रार्थना करती।

एक दिन ईश्वर ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। सुलता रानी गर्भवती हुई। खबर सुनते ही राजा आनंद-विभोर हो गया। इतने दिनों बाद वह संतान का चेहरा देखेंगे। छोटी रानी के प्रति उनका प्रेम और अधिक बढ़ गया। अब तो सारे समय वह सुलता रानी की ही सुख-सुविधाओं का ध्यान रखने लगे।

अन्य रानियां यह सब देखकर-जानकर आगबबूला हो उठीं। वे सब सोचने लगीं कि इसका कोई न कोई उपया तो करना ही होगा।

उन्हें उपाय मिल गया। छोटी रानी की देखभाल के लिए राजा विशेष रूप से एक दासी का प्रबंध कर रहे थे। यह जानकर बड़ी रानी प्रेमलता ने राजा से कहा, ''आप अलग से दासी की व्यवस्था क्यों करते हैं। हमारे रहते इस सब की क्या जरूरत है?''

राजा ने कहा, ''इसका तो मुझे ध्यान ही नहीं रहा, तुम लोगों के रहते किसी और को बुलाने की क्या जरूरत है।''
बड़ी रानी ने चेहरे पर एक बनावटी मुस्कुराहट लाकर कहा, ''मैं सब सम्भाल लूंगी। आप किसी भी प्रकार की चिंता न करें।''

यह सब सुनकर राजा बहुत खुश हुआ। बड़ी रानी प्रेमलता दूसरी रानियों को साथ लेकर छोटी रानी के घर पहुंची। सुलना के प्रति सहानुभूति दिखाते हुए बोलीं, ''डरने की कोई बात नहीं है छोटी बहू। हम लोगों के रहते तुम्हें कोई परेशानी नहीं होगी। हम लोग सब सम्भाल लेंगी।'' छोटी रानी दूसरी रानियों की बात पर सहज ही विश्वास कर बैठी। उनकी चाल को वह नहीं समझ सकी।

एक-एक कर छोटी रानी ने सात पुत्र और एक कन्या को जन्म दिया। यह देखते ही दूसरी रानियां ईर्ष्या से जलने लगीं। किसी भी अवस्था में वह यह सब सहन नहीं कर पा रही थीं। वे सोचने लगीं यदि राजा को यह मालूम हो गया कि छोटी रानी ने एक साथ सात पुत्र एवं एक कन्या को जन्म दिया है, तो फिर छोटी रानी ही राजा का हृदय साम्राज्ञी बनी रहेगी। नहीं, अभी ही इसका कुछ उपाय करना होगा।

चुपके से बड़ी रानी ने एक गमले में आठों जन्में शिशुओं को बांधकर पीछे के दरवाजे से बाहर बगीचे में चली गई। वहां एक गड्ढा खोदकर आठों बच्चों को एक साथ मिट्टी में दबा दिया। लौटते समय वह रास्ते में कुछ चूहे के और मेंढक के बच्चों को ले आई और बच्चों को एक टोकरी में डालकर छोटी रानी के पास रख दिया।

इधर राजा ने छोटी रानी के कमरे से अपने कमरे तक एक जंजीर बांध दी थी तथा कहा था—

''पुत्र होने पर लेकिन देना स्वर्ण जंजीर हिला, स्वर्ण मुख देखूंगा मैं उसे न होगा पता।''

बड़ी रानी को इसका ख्याल आया। वह तुरंत जंजीर खींचने लगी। आवाज सुनकर राजा दौड़ते हुए छोटी रानी के कमरे में आए। इतनी लम्बी प्रतीक्षा के बाद लड़के का चेहरा देखेंगे। इस आशा से उनका मन खुशी से उछल रहा था।

लेकिन राजा के प्रवेश करते ही बड़ी रानी ने दुखी चेहरा बनाकर राजा के सामने टोकरी बढ़ा दी। राजा ने पूछा—"कहां है मेरी संतान?"

"इस टोकरी में।" बड़ी रानी ने दुखी होकर उत्तर दिया।

"यह तो चूहे और मेंढक के बच्चे हैं।"

"हां इन्हें ही छोटी रानी ने जन्म दिया है।"

यह सुनते ही राजा पागलों की तरह इधर-उधर चक्कर लगाने लगा। बड़ी रानी ने उत्सुकता से जानना चाहा— "इन सब का अब क्या करेंगे?"

राजा ने चिल्लाते हुए उत्तर दिया— "इन सब को मिट्टी में गाड़ दो।"

इधर छोटी रानी सुलता ने चेतना लौटते ही सबसे पहले बड़ी रानी से पूछा— "दीदी, कहां हैं, मेरी संतान?"

"क्या कहें तुमको।" रोती हुई-सी आवाज में बड़ी रानी ने कहा, "मेंढक और चूहे के बच्चे हुए हैं, राजा तो देखते ही गुस्से से आगबबूला हो उठे और सब को मिट्टी में गाड़ देने का आदेश दिया। मैं भी क्या कर सकती थी। सभी को बगीचे में गाड़ आई हूं। तुम्हें दिखाने तक की हिम्मत नहीं हुई।"

यह सुनते ही सुलता बेहोश हो गई। यह सब देखकर छहों रानियों की खुशी का ठिकाना न रहा। सुलता के भाग्य में अब तो कष्ट ही कष्ट लिखें थे। संतान का मुंह न देख पाने से राजा इतना क्रोधित हो उठा कि उसने आदेश दिया कि ऐसी कुलक्षणी रानी को महल में रखने की कोई जरूरत नहीं। छोटी रानी को महल के बाहर निकाल देने की आज्ञा दी।

राजा के आदेश को सुनकर बड़ी रानियों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। इतने दिनों बाद उनकी इच्छा पूरी हुई थी। यह आदेश छोटी रानी को सुनाने के लिए वह जल्दी-जल्दी उसके पास पहुंची। छोटी रानी को इन सब बातों पर विश्वास ही नहीं हुआ। राजा उसके प्रति इतने निष्ठुर हो सकते है वह सोच भी नही सकती थी। अचानक राजा को यह क्या हुआ?

छोटी रानी सुलता को राजमहल से निकाल दिया गया। उसे राजा से मिलने भी नहीं दिया। गहने और राजसी कपड़ों को त्यागकर छोटी रानी सुलता राजमहल से दासी की तरह सड़क पर निकल पड़ी।

दिन पर दिन बीतने लगे। लेकिन राजा के मन को शांति न मिली। राजमहल जैसे श्मशान की तरह हो गया। राजा के बगीचे में अब फूल भी नहीं खिलते थे। राजा ने पूजा तक करनी बंद कर दी थी।

एक दिन एक आश्चर्यजनक घटना घटी। राजा के माली ने बगीचे में देखा कि सात चंपा और एक चमेली का फूल खिला है। माली ने तुरंत यह बात राजा को बताई। राजा ने माली से कहा, "वह फूल तोड़ लाओ। उन फूलों से मैं पूजा करूंगा।"

माली बगीचे में फूल तोड़ने गया। माली को देखते ही चमेली के फूल ने चंपा के फूलों को आवाज देकर कहा—

"सात भाई चंपा जागो रे।"

"यह सुनकर सात चंपा के फूलों ने एक साथ उत्तर दिया—

"क्यों बहन चमेली बुला रही है?"

चमेली ने पूछा—"राजा का माली आया है फूल तोड़ने। तुम लोग पूजा के लिए फूल दोगे?"

देखते-देखते चंपा के फूल यकायक ऊपर को उठ गए। गर्दन झुकाकर कहने लगे--

''नहीं देंगे, नहीं देंगे फूल,
होंगे और दूर,
पहले आए राजा,
उनको देंगे फूल।''

डर से माली का चेहरा सफेद पड़ गया। उसने ऐसी घटना पहले कभी नहीं देखी थी। टोकरी फेंककर वह उल्टे पांव राजा के पास पहुंचा। राजा यह सुनकर स्तब्ध रह गया। राजा राजसभा से सभी सभासदों को लेकर बगीचे में चले आए। जैसे ही राजा ने फूल तोड़ने के लिए हाथ बढ़ाया। पहले की तरह ही चमेली ने चंपा के फूलों को आवाज देकर कहा—

''सात भाई चंपा जागो रे।''

पहले की भांति सातों चंपा फूलों ने एक साथ उत्तर दिया—

''क्यों बहन चमेली बुला रही है?'

चमेली ने पूछा—''राजा स्वयं ही आए हैं। फूल दोगे कि नहीं बोलो?'' फूल और ऊपर उठ गए। उसके बाद एक साथ कह उठे—

"नहीं देंगे, नहीं देंगे फूल,
होंगे बहुत दूर,
पहले आए बड़ी रानी,
उनको देंगे फूल।"

राजा ने बड़ी रानी को बुला लाने को कहा। थोड़ी देर में ही वह बगीचे में आकर खड़ी हो गई। शंख बजाते हुए बड़ी रानी फूल तोड़ने के लिए आगे बढ़ी। किंतु यह क्या चंपा के फूल ऊपर को उठते हुए कहने लगे—

"नहीं देंगे, नहीं देंगे फूल,
होंगे बहुत दूर,
पहले आए मझली रानी,
उनको देंगे फूल।"

राजा के आदेश से मझली रानी आई। लेकिन अबकी बार भी पहली-सी घटना घटी। उसके बाद एक-एक कर अन्य रानियां आईं। सबसे अंत में चंपा के फूलों ने कहा—

"नहीं देंगे, नहीं देंगे फूल,
होंगे बहुत दूर,
पहले आए छोटी रानी,
उनको देंगे फूल।"

लेकिन कहां है छोटी रानी? राजा ने तो उसे महल से बाहर निकाल दिया था। चारों ओर छोटी रानी की खोज होने लगी। नौकर, रक्षक, सिपाही सभी ने छोटी रानी को खोजना शुरू किया।

अंत में छोटी रानी मिल ही गई। उसके कपड़े फटे थे। बहुत ही दयनीय अवस्था में थी। उसी अवस्था में वह फूल तोड़ने के लिए आगे बढ़ी। आश्चर्य अपने आप ही सातों चंपा के फूल नीचे झुक आए। उन्हीं के बीच चमेली का फूल भी मिल गया।

उसके बाद सातों चंपा के फूलों से चांद की तरह सात सुंदर राजकुमार और चमेली के फूल से एक अपूर्व सुंदरी राजकुमारी बाहर आई। मां-मां कहते हुए सभी छोटी रानी की ओर दौड़ पड़े।

राजा की आंखों से आंसू बहने लगे। वह सब कुछ समझ गया था, उसने तुरंत आदेश दिया कि सभी रानियों को अंध कूप में डाल दिया जाए।

राजा, सातों राजपुत्र, चमेली-सी राजकन्या और छोटी रानी को लेकर राजमहल वापस आए। चारों ओर आनंद ही आनंद छा गया।

शीत-बसंत

एक राजा था। उसकी दो रानियां थीं। बड़ी रानी को राजा बहुत मानते थे। बड़ी रानी की इच्छानुसार ही गृहस्थी का सारा कामकाज चलता था। किंतु बेचारी छोटी रानी के अवहेलना में दिन कटते थे। राजा छोटी रानी को बिल्कुल नहीं चाहता था।

छोटी रानी के दो पुत्र थे। उनके नाम थें शीत और बसंत। राजा को अपनी छोटी रानी के दोनों पुत्रों का भी बिल्कुल ख्याल न रहता था। यही नहीं उन्हें अच्छा खाना-पीना व बढ़िया कपड़े उपलब्ध नहीं कराए जाते थे। यह सब जानते हुए भी छोटी रानी चुपचाप सहती थी। बड़ी रानी को इतने पर भी संतुष्टी नहीं थी। हर समय उसकी यही चेष्टा रहती थी कि वह किस तरह छोटी रानी को नीचा दिखाए।

एक दिन दोनों रानियां स्नान के लिए घाट पर गईं। बड़ी रानी ने छोटी रानी से बड़े प्यार से कहा—"आओ, तुम्हारे सिर में तेल लगा दूं।"

छोटी रानी को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। बड़ी रानी से इस प्रकार का व्यवहार किए जाने के सम्बंध में वह कभी सोच भी न सकती थी। पर बड़ी रानी ने मन ही मन कुछ और ही योजना बना रखी थी। इस बात को छोटी रानी समझ नहीं सकी। बड़ी रानी ने उस तेल में पहले ही एक दवाई मिला दी थी। फलस्वरूप छोटी रानी के सिर में तेल लगाते ही वह तोता बनकर आकाश में उड़ गई। बड़ी रानी ने दिखावा करते हुए बड़े ही दुखी मन से राजा को बताया कि छोटी रानी स्नान करते समय पानी में डूब गई।

राजा ने बड़ी रानी की बात पर सहज ही विश्वास कर लिया। इधर मां के न मिलने पर शीत और बंसत रोते-रोते थक गए। लेकिन कोई उन्हें चुप कराने नहीं आया, न ही राजा और न ही बड़ी रानी। रोते-रोते उनकी आंखें भी लाल हो गई थी।

इधर तोता बनी छोटी रानी उड़ते-उड़ते एक अन्य राजा के देश में चली गई। राजमहल के अंदर एक बरामदे में जाकर बैठ गई। उस देश के राजा की लड़की का नाम बसंतलता था। उसे बरामदे में बैठा तोता बहुत अच्छा लगा। उसने राजा से मचलते हुए कहा—

"मुझे यह तोता पकड़कर दो।"

"उसे लेकर क्या करोगी?" राजा ने पूछा।

"मैं पालूंगी। देखते नहीं, कितना सुंदर तोता है।" लड़की ने उत्तर दिया।

राजा का आदेश पाकर नौकरों-चाकरों ने कोशिश कर तोते को पकड़ ही लिया। उसे पिंजड़ें में बंद कर दिया।

देखते-देखते कई वर्ष बीत गए। उधर बड़ी रानी के तीन पुत्र हुए। लेकिन उनका शरीर अजीब तरह का था। शरीर हड्डियों का ढांचा भर था। यह देखकर बड़ी रानी की आंखों से आंसू बहने लगे। वह अच्छी तरह से लड़कों की देखभाल करती। मछली, मांस, खीर और तरह-तरह के पकवान खिलाती फिर भी लड़कों के शरीर में कोई बदलाव नहीं आता।

बड़ी रानी शीत और बसंत को खाने को कुछ भी नहीं देती थी तब भी वे दोनों भाई खूब गोल-मटोल स्वस्थ रहते थे। बड़ी रानी को वे जरा भी नहीं सुहाते थे।

एक दिन की बात है शीत और बसंत गुरुजी के पास से घर लौटे तो उन्हें देखते ही बड़ी रानी गला फाड़-फाड़कर रोने लगी और चीजें उठा-उठाकर मारने लगी। दासियों ने यह सारी घटना राजा को बताई। राजा दौड़ते हुए बड़ी रानी के पास आए और पूछने लगे—"बड़ी रानी क्या हुआ है तुम्हें?"

"ये दोनों लड़के मुझे जो मन में आता है बोलते हैं, उनके खून से स्नान किए बिना मेरा कलेजा ठंडा नहीं होगा।"

"यही होगा। तुम शांत हो जाओ बड़ी रानी।" राजा ने कहा।

शीत और बसंत कुछ समझ नहीं सके किं उनका अपराध क्या है? राजा ने जल्लाद को बुलाकर आदेश दिया—

"शीत-बसंत की बलि चढ़ाकर उनका खून बड़ी रानी को लाकर दो।"

राजा के आदेश का उल्लंघन करने का साहस किसी में नहीं था। जल्लाद शीत-बसंत के हाथ-पैरों को रस्सी से बांधकर बलि चढ़ाने के लिए ले गया। शीत-बसंत चीत्कार करते हुए रोने लगे। किन्तु कोई भी उनकी सहायता के लिए आगे नहीं आया।

जल्लाद शीत-बसंत को एक घने जंगल में ले गया। उसके बाद उनके पहने हुए कपड़े उतारकर पेड़ की छाल पहना दी। उनके शरीर पर मैली चादर डाल दी और हाथ-पैर के बंधन खोल दिए। उसकी आंखें छलछला आईं। उनसे विदा लेने से पहले उसने कहा—

"मुझमें राजा की आज्ञा का उल्लंघन करने का साहस नहीं है। किन्तु मैंने तुम दोनों को अपनी आंखों के सामने बड़ा होते देखा है। किस तरह मैं तुम लोगों को बलि चढ़ाऊंगा? मेरा जो होगा हो। इस समय तुम लोगों को जो सामने रास्ता दिखाई दे रहा है उधर चले जाओ। तुम्हारे कपड़े भी इसी कारण बदल दिए हैं, जिससे कोई भी तुम्हें राजपुत्र नहीं समझ सकेगा।"

जल्लाद उन्हें वहीं जंगल में छोड़कर नगर की ओर चल पड़ा। लौटते समय उसने रास्ते में एक कुत्ते और एक सियार को मारकर उनका खून बड़ी रानी को दे दिया। उस खून से स्नानकर बड़ी रानी बहुत खुश हुई। उस दिन बड़ी रानी ने अपने लड़कों को बहुत स्वादिष्ट भोजन खिलाया।

इधर शीत-बसंत जंगल में बाहर निकलने के लिए आगे बढ़े। चलते-चलते उन्हें ऐसा लगा मानों जंगल का कोई अंत ही न हो। वे जंगल में चलते ही जा रहे थे। थोड़ी देर बाद थककर वे एक पेड़ के नीचे बैठ गए। बसंत ने कहा—

"बहुत जोर से प्यास लगी है भाई। पानी कहां मिलेगा?"

"पानी? पानी यहां कहां मिलेगा? इतनी दूर हम लोग चलकर आए हैं लेकिन कहीं भी पानी नहीं दिखाई दिया।" शीत ने कहा।

"किन्तु प्यास के मारे मेरा बुरा हाल हो रहा है।" बसंत ने कहा।

"तुम यहीं पर कुछ देर प्रतीक्षा करना भाई। मैं आसपास देखता हूं शायद कहीं पानी मिल जाए।" शीत ने बसंत को ढाढस बंधाते हुए कहा।

शीत पानी की खोज में निकल पड़ा। चलते-चलते एक जगह उसे तालाब दिखा। किन्तु वह बसंत के लिए पानी कैसे लेकर जाए। उसे अपनी चादर का ध्यान आया और सोचने लगा कि इस चादर को पानी में भिगोकर ले चलता हूं तो कुछ पानी तो बसंत को पीने के लिए मिल ही जाएगा। यह सोचकर शीत तालाब में उतरा।

उधर बसंत शीत की प्रतीक्षा करता रहा और इधर शीत के साथ एक और ही घटना घटी। यह जंगल जिस राज्य की सीमा में आता था, उस राज्य के राजा की अचानक मृत्यु हो गई थी। उसकी कोई संतान न थी। अब राज सिंहासन पर कौन बैठेगा? सिंहासन तो खाली नहीं रह सकता। इस बात पर प्रजा के बीच बहुत वाद-विवाद हुआ, लेकिन किसी नतीजे पर नहीं पहुंचा गया। तब राज्य के मंत्रियों एवं प्रजा ने यह निश्चय किया कि जिसके माथे पर राजटीका होगा, उसे ही सिंहासन पर बैठाया जाएगा।

योजनानुसार सफेद हाथी की पीठ पर राज सिंहासन को बांधकर छोड़ दिया गया। सफेद हाथी माथे पर राज टीका

लगे व्यक्ति को खोजने निकल पड़ा। अंत में वहां जा पहुंचा, जहां शीत तालाब में उतरकर चादर भिगो रहा था।

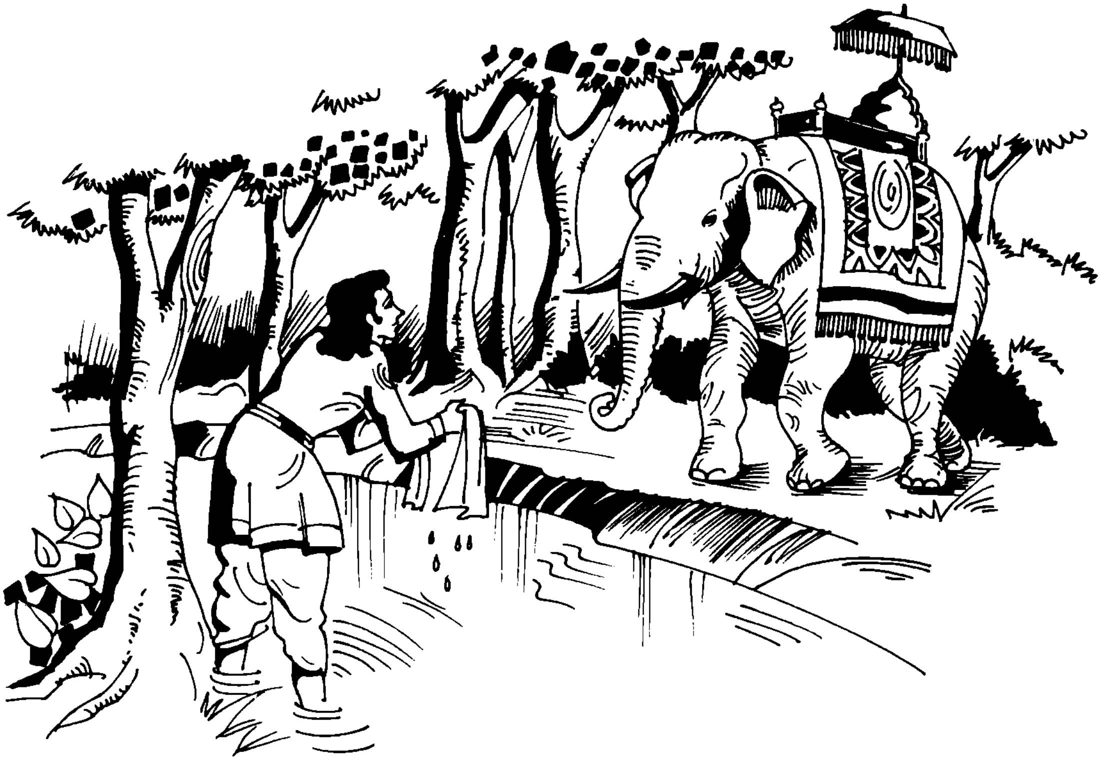

शीत के माथे पर राज टीका देखते ही सफेद हाथी ने सूंड बढ़ाकर शीत को उठाया और राज सिंहासन पर बैठा दिया। असहाय-सा शीत 'बसंत बसंत' पुकारने लगा, लेकिन सब व्यर्थ। सफेद हाथी शीत को लेकर तेजी से नगर की ओर चल पड़ा।

बसंत पेड़ के नीचे बहुत देर तक भाई का इंतजार करता रहा। भाई के न लौटने से वह बहुत डर गया। उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। सारा दिन बीत गया। भाई के वापस न आने से बसंत का रोते-रोते बुरा हाल हो गया। वह अपने भाई का इंतजार करते-करते वहीं सो गया।

दूसरे दिन सुबह एक संन्यासी वहां से गुजर रहा था। बसंत को इस तरह धूल में पड़ा देखकर उसे बहुत दया आई। उसने बसंत को गोद में उठा लिया और जंगल में बनी हुई कुटिया में ले गया।

उधर सफेद हाथी शीत को लेकर मृत राजा की प्रजा के सामने खड़ा हो गया। उपस्थित प्रजाजन ने नए राजा का स्वागत किया। सभी ने सिर झुकाकर अभिवादन किया। शीत को राज सिंहासन पर बैठाया गया और तिलक किया गया। शीत कुछ समझ ही नहीं पा रहा था कि यह सब क्या हो रहा है। उसे रह-रहकर अपने भाई बसंत की याद आ रही थी।

समय बीतता गया। शीत ने हालात से समझौता कर लिया। वह कुशलतापूर्वक राज-काज को देखने लगा। उसे किसी भी प्रकार का अभाव न था।

बसंत जंगल में संन्यासी की कुटिया में दिन बिता रहा था। वह रोज संन्यासी के हवन के लिए जंगल से लकड़ियां चुनकर लाता और पूजा के लिए फूल लाकर देता था और फल खाकर अपना पेट भरता था। कभी संन्यासी के पास बैठकर शास्त्रों और वेदों को सुनता।

शीत और बसंत के पिता का दैविय प्रकोप से सारा राज्य भी समाप्त हो गया था। ऐसे में राजा भी सब कुछ छोड़ अज्ञातवास को चला गया था। राजा के चले जाने से बड़ी रानी की भी दशा बड़ी दयनीय हो गई थी। वह अपना निर्वाह भिक्षा मांगकर करने लगी। सभी उसके फटे-चिथड़े, गंदे कपड़ों को देखकर दुतकार कर भगा देते। एक दिन बड़ी रानी दुखी होकर अपने तीनों बेटों के साथ समुद्र के किनारे खड़ी थी कि अचानक उसके तीनों बेटे समुद्र में बह गए। लड़कों को बचाने की उसने बहुत चेष्टा की पर सब बेकार रही। इससे दुखी हो व स्वयं भी समुद्र में कूद पड़ी।

उधर राजा की लड़की बसंतलता भी अब बहुत बड़ी हो गई थी। राजा ऐसी रूपवती लड़की के लिए योग्य वर नहीं खोज पा रहा था। इसलिए रानी से परामर्श कर उन्होंने स्वयंवर का आयोजन किया। भिन्न-भिन्न देशों के राजपुत्र सभा में पधारे। राजा ने कहा—"सभी राजपुत्र आसन पर बैठेंगे और बसंतलता हाथ में माला लेकर वहां जाएगी, उसे जो राजपुत्र पसंद आएगा, उसके गले में ही वरमाला पहनाएगी।

बसंतलता ने स्वयंवर में जाने के लिए शृंगार किया। बालों का जूड़ा बनाया। आंखों में काजल लगाया, पांव में आलता लगाया। फिर तोता बनी रानी से पूछने लगी—

"बोलो तो तोते और क्या चाहिए मुझे?"

"मैं यदि तुम होती तो सोने की पायल पांवों में पहनती। इससे रुनझुन आवाज होती।" तोते ने उत्तर दिया।

बसंतलता ने सोने की पायल पैरों में पहन ली।

"बोलो तो तोता और क्या चाहिए मुझे?"

"मैं यदि तुम होती, तब सोने के जरी की साड़ी पहनती।" तोते ने कहा।

तोते की बात सुनकर बसंतलता ने अपनी साड़ी बदली। सोने के जरी की साड़ी पहनी। इस बार पूछते ही तोते ने जवाब दिया—"तुम अब हीरे का हार गले में पहन लो तो और सुंदर दिखोगी।" बसंतलता ने हीरे का हार गले में पहन लिया। तोते ने तब कहा—

"नाक में मोती की लोंग, कानों में जड़ाऊ कर्ण फूल और मांग में हीरे का टीका न पहनने से नारी का पूरा शृंगार नहीं होता, क्या तुम यह नहीं जानती।"

बसंतलता उसी तरह सजी। तोता यह देखकर फिर से कह उठा—

"सब कुछ तो हुआ लेकिन गजमुक्ता न होने से क्या पूर्ण होगा साज-शृंगार। तुम्हारे पास तो वह है भी नहीं। यदि स्वयंवर सभा में से कोई राजपुत्र तुम्हें गजमुक्ता दे दे तो समझो वही तुम्हारे योग्य वर है।"

यह सुनते ही बसंतलता ने अपना साज-शृंगार खोल दिया और घोषणा की कि, जो राजपुत्र गजमुक्ता लाकर दे सकेगा, उसी से वह विवाह करेगी।

यह सुनते ही वहां उपस्थित राजपुत्र गजमुक्ता की खोज में निकल पड़े। सभी राजपुत्रों ने यह सुन रखा था कि सभी हाथियों में गजमुक्ता नहीं होती है। गजमुक्ता तो समुद्र के किनारे रहने वाले किसी-किसी हाथी के सिर में ही मिल सकती है। अतः सभी राजपुत्र समुद्र की ओर चल पड़े। समुद्र के किनारे पहुंचने से पहले ही हाथियों के एक झुंड ने राजपुत्रों पर धावा बोल दिया, जिससे बहुतों के हाथ-पैर टूटे कई घायल हो गए, राजपुत्र हताश वापस लौट गए।

कुछ दिनों में यह समाचार शीत राजा तक जा पहुंचा। वह अत्यंत क्रोधित हो उठा। उसने निश्चय किया कि वह बसंतलता के घमंड को चूर-चूर कर देगा। उसने बसंतलता के पिता के राज्य पर आक्रमण कर दिया। आक्रमण में बसंतलता के पिता की पराजय हुई। बसंतलता को राजा शीत ने बंदी बना लिया।

उधर बसंत संन्यासी की कुटिया में अपने दिन काट रहा था। वह सारा दिन इधर-उधर घूमता रहता। उसी कुटिया के पास एक विशाल बरगद का पेड़ था। वहीं एक गुल और एक बुलबुल रहती थी। एक दिन दुखी होकर जब बसंत उस पेड़ के नीचे बैठकर आराम कर रहा था, तब वहीं उसने गुल और बुलबुल की बातचीत सुनी। गुल ने स्वयंवर सभा को विफल होने की बात बुलबुल को कह सुनायी और बोला—"कौन जाने इसका क्या परिणाम होगा?"

बुलबुल ने कहा—"क्षीर सागर के किनारे एक दूध-पहाड़ है। दूध-पहाड़ से क्षीर सागर में दूध गिरता है। उसी क्षीर सागर में एक स्वर्ण कमल खिला है, उसी स्वर्ण कमल में एक सफेद हाथी है। उसी के सिर में गजमुक्ता है।"

"लेकिन वहां कौन पहुंच पाएगा?"

गुल का प्रश्न सुनकर बुलबुल ने कहा—"साहसी राजपुत्र ही वहां पहुंच पाएगा।"

बसंत जो ये सभी बातें सुन रहा था उसने गुल और बुलबुल से कहा— "मैं गजमुक्ता लेने जाऊंगा। तुम दोनों क्या मेरी कुछ सहायता करोगे?"

"निश्चय ही। किन्तु पहले संन्यासी के पास जाकर उनका त्रिशूल ले आओ, उसके बाद सेमल के पेड़ के पास जाकर राजपुत्र के वस्त्र मांगों। तुम्हें सब मिल जाएगा।" गुल और बुलबुल ने बताया। बसंत ने संन्यासी से त्रिशूल लिया। सेमल के पेड़ से राजपुत्र की पोशाक लेकर पहनी। उसके बाद क्षीर सागर की ओर बढ़ने लगा।

क्षीर सागर पहुंचकर बसंत ने देखा कि स्वर्ण कमल के बीच दूधिया रंग के हाथी के सिर पर गजमुक्ता है। गजमुक्ता की रोशनी से चारों ओर उजाला ही उजाला था।

बसंत और प्रतीक्षा नहीं कर सकता था, वह सफेद हाथी की पीठ पर कूद पड़ा। जैसे ही उसने सफेद हाथी के सिर पर त्रिशूल लगाया, वैसे ही सागर, स्वर्ण कमल, सफेद हाथी सब गायब हो गए। केवल वहां एक कमल का खिला फूल था और उसी के अंदर गजमाला थी। मनुष्य की आवाज में कमल के फूल ने पूछा—"निश्चय ही तुम कोई राजपुत्र होगे। तुम्हारा घर कहां है?"

"मैं राजपुत्र नहीं हूं। संन्यासी के साथ जंगल में रहता हूं।" बसंत ने उत्तर दिया।

"ठीक है। तुम गजमुक्ता को अपने सिर पर रखो और मुझे हृदय में। बसंतलता के साथ तुम्हारा ही विवाह होगा और तुम्हारा सारा जीवन सुख से व्यतीत होगा।"

बसंत फिर क्षीर सागर की बालू पर से होता हुआ देश की ओर लौटने लगा, अचानक उसे कुछ आवाजें सुनाई दी, "हम लोगों को भी साथ लेकर चलो भाई।" बसंत भौचक्का-सा चारों ओर देखने लगा। आस-पास कोई न था। उसने पुनः पैर उठाया तो फिर उसे किसी ने पुकारा। ध्यान से देखा तो उसे लगा कि जहां वह खड़ा है वहीं बालू में से यह आवाजे आ रही हैं। बसंत ने त्रिशूल से बालू को खोदकर देखा, वहां तीन सोने की मछलियां थीं। वह इन्हें अपने साथ लेकर चल पड़ा।

इधर, शीत राजा शिकार के लिए गया हुआ था। सारा दिन कोशिश करने पर भी एक हिरण का शिकार भी नहीं मिल सका। दुखी होकर वह एक पेड़ के नीचे लेटकर आराम करने लगा।

अचानक उसे याद आया कि वह और बसंत जल्लाद के हाथों से छुटकारा पाकर इसी पेड़ के नीचे बैठे थे। वह बसंत के लिए जल लेने गया था और फिर वह लौट ही नहीं सका। बसंत का क्या हुआ होगा? कौन जाने? क्या वह अभी भी जीवित होगा? यह सोचकर उसका मन रो पड़ा। वह अपने राजमहल लौट आया। एकांत में बैठकर वह केवल बसंत की बात सोचने लगा। बसंत उस समय गजमुक्ता लेकर बसंतलता के राज्य में पहुंचा। वहां से उसे पता चला कि शीत राजा ने बसंतलता को बंदी बना लिया है।

बसंत सीधा शीत राजा के राजमहल पहुंच गया। राजा के अंगरक्षकों को तीन सोने की मछलियां देकर कहा कि—"अपने राजा से कहें कि बसंतलता को छोड़ दिया जाए।"

लेकिन शीत राजा तो भाई के शोक में उद्विग्न हो अपने ही कमरे में दरवाजा बंद कर बैठा था। राजा की आज्ञा की प्रतीक्षा में सात दिन तक बसंत लाचार, त्रिशूल हाथ में लिए, गजमुक्ता सिर पर रखे वहीं राजमहल के सामने बैठा रहा।

आठवें दिन शीत राजा के कुछ ठीक होने पर दासियां सोने की मछलियां काटने बैठीं। लेकिन आश्चर्य मछलियां बोल उठीं— "हमें मत काटो। हम राजा के भाई हैं।"

अंगरक्षकों ने जब शीत राजा को बसंत का संदेश सुनाया तो शीत राजा स्वयं राजमहल के बाहर आए। वहां अपने भाई बसंत को देखा। उसने दौड़कर अपने भाई को गले लगा लिया। तभी वे दासियां उन विचित्र बोलने वाली मछलियों को लेकर राजा के सम्मुख पहुंची। किन्तु यह क्या शीत राजा के हाथ लगाते ही तीनों मछलियां तीन मनुष्यों में बदल गईं। पहचानने में मुश्किल नहीं हुई क्योंकि वे बड़ी रानी के पुत्र थे। शीत-बसंत के सौतेले भाई। शीत-बसंत ने बड़ी रानी और राजा के दुर्भाग्य की सारी बातें सुनी। उनकी आंखों से आंसू बहने लगे। पांचों भाई फिर से राजमहल में एक साथ रहने लगे।

शीत राजा भाई बसंत के विवाह की तैयारियां करने लगा। बसंतलता के पिता के पास तुरंत समाचार भेजा कि उन्हें अभी मुक्त किया जाता है तथा सम्मानपूर्वक उन्हें उनका राज्य आदि भी लौटाया जाता है।

पिंजड़े का तोते ने बसंतलता को आवाज देकर बोला— "गजमुक्ता लेकर राजपुत्र आ गया है।"

"जानती हूं।" बसंतलता ने कहा।

ठीक उसी समय एक दासी दौड़ती हुई बसंतलता के पास आई और हंसते-हंसते उसने कहा—"शीत राजा के भाई ही गजमुक्ता लेकर आए हैं।"

राजकन्या यह सुनकर अत्यधिक प्रसन्न हुई। उसने निश्चय किया कि वह अपने प्रिय तोते को आज स्वयं ही स्नान कराएगी। उसने कपिला गाय के दूध में कच्ची हल्दी मिलाई और तोते को स्नान कराने लगी। अचानक बसंतलता के हाथ से तोते के सिर की दवाई पुछ गई। देखते-देखते तोता एक सुंदर नारी बन गया। बसंतलता ने आश्चर्य से पूछा—

"तुम कौन हो? परी या देवता?"

"मैं राजरानी हूं। शीत और बसंत मेरे ही बेटे हैं।" और रानी ने अपनी सारी आपबीती कह सुनाई। अगले दिन बसंतलता के साथ बसंत का विवाह बहुत धूमधाम से हो गया। विदा के समय बसंतलता ने अपने पिता से कहा—

"मैं अकेली पालकी में जाऊंगी।"

"यह फिर कैसी बात।" पिता ने कहा।

"मैंने यह प्रण किया था कि सुबह ही प्रार्थना के समय में अकेली ही रहूंगी," बसंतलता ने कहा।

"ठीक है जैसा तुम कहोगी वही होगा," पिता ने बेटी की जिद को देख उत्तर दिया।

सभी से विदा लेकर बसंतलता सुंदर पालकी में जा बैठी। चुपचाप छोटी रानी को भी अपनी पालकी में बैठा लिया। बसंत भी अपनी पालकी में जाकर बैठ गया।

शीत राजा के महल में जब पालकी आकर रुकी, तब बसंतलता पालकी से उतरी और अपनी ही पालकी की ओर घूम गई। पालकी की ओर सब लोग आश्चर्यचकित से देख रहे थे कि पालकी के भीतर बसंतलता के अलावा एक अपूर्व सुंदर नारी भी थी। पालकी से उतरते ही उसने आवाज दी, "कहां हैं मेरे शीत-बसंत। आओ इधर आओ।"

मां की पुकार सुनते ही शीत राजा तथा बसंत दोनों मां की ओर दौड़ पड़े तथा उससे लिपट गए। बड़ी रानी के तीनों पुत्र भी उधर दौड़कर जा पहुंचे।

इस सुखद समाचार को सुनकर थोड़े दिनों बाद राजा भी लौट आए। इस प्रकार छोटी रानी के दुखों का अंत हुआ। शीत-बसंत, बड़ी रानी के तीनों पुत्र, रूपवती बसंतलता एवं राजा के सुख से दिन बीतने लगे।

डालिमकुमार

एक राजा की दो रानियां थीं सुओरानी और दुओरानी। लेकिन दोनों की कोई संतान नहीं थी। इस कारण राजा बहुत दुखी रहता था और इसी सोच में डूबा रहता था कि उसके मरने के बाद इतने बड़े राज्य का उत्तराधिकारी कौन होगा?

एक दिन की बात है, एक भिक्षुक भिक्षा मांगता हुआ राजमहल के सिंह द्वारा पर आया। सुओरानी भिक्षा देने के लिए गई। भिक्षुक ने उससे पूछा, "तुम्हारी संतान तो है।"

"नहीं बाबा," दुखी मन से सुओरानी ने उत्तर दिया।

"बांझ के हाथ से भिक्षा लेना मेरे लिए अशुभ है," भिक्षुक ने कहा। यह सुनकर सुओरानी की आंखों में आंसू भर गए। यह देखकर भिक्षु को उस पर दया आ गई और उसने सुओरानी से कहा—"यदि चाहो तो जड़ी-बूटी द्वारा तुम्हें संतान हो सकती है।"

"वही दे दो बाबा।" करुण स्वर में सुओरानी ने कहा। भिक्षु ने एक पुड़िया निकालकर सुओरानी के हाथ में थमा दी और कहने लगा— "इन्हें डालिम फूल के रस में मिलाकर खाना। उससे तुम्हें जो पुत्र होगा उसके शरीर का रंग डालिम फूल की तरह होगा। उसका नाम तुम डालिमकुमार रखना।"

"डालिमकुमार!" सुओरानी ने पूछा।

"हां डालिमकुमार, देखने में बहुत सुंदर होगा, लेकिन सावधान रहना शत्रु हर समय उसे मारने की चेष्टा करेंगे। इसीलिए पहले से ही तुम्हें बता देता हूं, तुम्हारे पुत्र के प्राण राजमहल के सामने तालाब में जो बोयाल मछली है। उस मछली के कलेजे में एक लकड़ी की डिब्बी है, जिसमें एक सोने का हार है वह हार ही तुम्हारे लड़के का जीवन है। इसलिए तुम उस बोयाल मछली का सदैव ध्यान रखना।" भिक्षुक यह कह कर चला गया।

कुछ समय बाद सुओरानी के एक पुत्र हुआ। इतनी सुंदर शक्ल-सूरत उसने पहले कभी नहीं देखी थी। कुछ महीनों के बाद राजा ने पुत्र का अन्नप्राशन बहुत धूमधाम से किया। सारे राज्य की प्रजा बहुत प्रसन्न थी।

देखते-देखते डालिमकुमार बड़ा होने लगा। रूप-गुण में उसके मुकाबले और कोई नहीं था। कबूतरों से खेलना उसे बहुत अच्छा लगता था। लेकिन उन कबूतरों को अद्भुत अभ्यास था। उड़ा देने पर भी वे दुओरानी के महल पर बैठ जाते थे। पहले तो खुशी से दुओरानी कबूतरों को लौटा देती लेकिन धीरे-धीरे अनिच्छा से लौटाने लगी।

दुओरानी डालिमकुमार से नफरत करती थी। उसकी आंखों में वह सदा खटकता रहता था। उसका कारण यह था कि राजा डालिमकुमार के जन्म के बाद से उसकी मां सुओरानी को अधिक चाहने लगा था, जिससे दुओरानी को ईर्ष्या होने लगी थी।

दुओरानी को आखिर यह बात मालूम पड़ गई कि एक फकीर की दी हुई जड़ी-बूटी को खाकर ही सुओरानी के पुत्र हुआ है। पुत्र के प्राण की रक्षा किस प्रकार होगी, यह दुओरानी नहीं जानती थी। अतः वह डालिमकुमार को ही बहला-फुसलाकर इसका भेद मालूम करना चाहती थी।

दूसरे दिन ही डालिमकुमार का कबूतर उड़कर दुओरानी के महल पर जा बैठा। दुओरानी ने डालिमकुमार को पास बुलाकर कहा— "एक बात बताओगे तभी कबूतर दूंगी, नहीं तो नहीं दूंगी।"

"क्या बात बड़ी मां?"

"ऐसा कुछ नहीं। तुम्हारे प्राण किसमें हैं, केवल यही बात मुझे बताओ"

"प्राण!" डालिमकुमार को आश्चर्य हुआ। "प्राण तो मेरे शरीर में ही हैं।"

"नहीं-नहीं, एक फकीर ने तुम्हारी मां से कहा था कि तुम्हारे प्राणों को जाने किसमें बांधकर रखा है।" दुओरानी ने कहा।

"ऐसा है! मैं तो नहीं जानता," डालिमकुमार ने उत्तर दिया।

"तो फिर अपनी मां से पूछकर मुझे बताना। तभी मैं कबूतर छोड़ूंगी अन्यथा नहीं," दुओरानी ने कहा।

"इसमें क्या है। मां से पूछकर तुम्हें सब बता जाऊंगा। अब तो कबूतर लौटा दो।" डालिमकुमार ने कहा।

"देती हूं। लेकिन इस बात का किसी को पता न चले कि मैंने यह बात जाननी चाही है।" दुओरानी ने दोहराया।

"हूं! नहीं कहूंगा।" डालिमकुमार ने कहा।

दूसरे दिन दुओरानी द्वारा पूछी गई सारी बातें डालिमकुमार ने अपनी मां से पूछी, "मां! मेरे प्राण किसमें हैं बताओ ना।"

यह बात सुनकर सुओरानी घबरा गई।

"ऐसी अशुभ बात मुंह से नहीं निकालते," मां ने डालिमकुमार से कहा। पर डालिमकुमार तो जानना ही चाहता था अतः उसने कहा— "अगर नहीं बताओगी, तो मैं कुछ भी नहीं खाऊंगा। पानी तक नहीं छुऊंगा।"

सुओरानी के पास अब कोई रास्ता न था, उसने डालिमकुमार से उसके प्राणों के रहस्य की सारी बात कह डाली। दूसरे दिन भोला-भाला डालिमकुमार जब दुओरानी के महल में कबूतर लेने गया तो उसने सारी बात दुओरानी को बता दी।

दुओरानी ने डालिमकुमार को कबूतर लौटा दिए पर अपनी चाल को पूरा करने में लग गई। उसने दासियों को बुलाकर पाट की सूखी झाड़न लाने को कहा। दासियां वह ले आई। दुओरानी सूखी झाड़न को अपने बिछौने के नीचे बिछाकर उस पर लेट गई और राजा के पास अपनी बीमारी के बारे में संदेश पहुंचाया।

समाचार सुनते ही राजा दुओरानी को देखने आए। राजा ने देखा कि रानी बिस्तर पर इधर-उधर लोटती हुई विचित्र मट्-मट्-सी आवाज कर रही थी।

"क्या हुआ है तुम्हें?" राजा ने पूछा।

"हड्डियों में आवाज का रोग," दुओरानी ने कराहते हुए कहा।

राजा ने प्रधान वैद्य को बुला भेजा। वैद्य के साथ दुओरानी की पहले से ही सारी बातें तय हो गई थीं। उसने राजा से कहा— "दुओरानी बहुत बीमार है। एक ही दवाई है, जो दुओरानी को इस बीमारी से बचा सकती है।"

"कौन-सी दवाई?" राजा ने पूछा।

"राजमहल के सामने बड़े तालाब में एक बोयाल मछली है। उसके कलेजे के भीतर जो दवाई है, उसे दुओरानी के शरीर पर लगाने से ही वह ठीक हो सकती है," वैद्य ने बताया।

राजा ने तुरंत ही मछुआरे को बुलाकर तालाब से मछली पकड़ने का आदेश दिया। डालिमकुमार उस समय तालाब के किनारे फूल के बगीचे में अपने साथियों के साथ खेल रहा था। मछुआरे ने जैसे ही बोयाल मछली को पकड़कर किनारे पर फेंका वैसे ही डालिमकुमार छटपटाने लगा। तभी उसे उठकार सुओरानी के महल में ले गए।

इधर वैद्य के निर्देश से बोयाल मछली को लेकर दुओरानी के महल मछुआरे पहुंचे। उधर डालिमकुमार सुओरानी की गोद में अंतिम सांसें ले रहा था।

एकमात्र पुत्र की मृत्यु से राजा मानों एकदम पागल हो गए। डालिमकुमार के शरीर को उन्होंने जलाने अथवा गाड़ने नहीं दिया। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि डालिमकुमार अब नहीं रहा है। नगर के बाहर बगीचे में राजा का एक सुंदर-सा महल था। वहीं उन्होंने डालिमकुमार के शरीर को अच्छी तरह सजाकर रखा। एक जीवित मनुष्य के लिए जिन-जिन चीजों की जरूरत होती है, राजा के आदेश से वह सब वहां रख दी गई। राजा की आज्ञानुसार दिन-रात उस मकान में ताला बंद रहता। चाभी डालिमकुमार के सबसे प्रिय मित्र मंत्रिपुत्र के पास रहती। वह दिन में एक बार मकान के भीतर जाकर सब कुछ देख आता।

इधर पुत्र के न रहने से सुओरानी बहुत दुखी रहती। अब राजा भी दुओरानी के महल में ही ज्यादा समय बिताते। राजा के मन में किसी प्रकार का संदेह न हो, इसलिए दुओरानी राजा के आते ही गले का हार खोल देती। ठीक उसी समय डालिमकुमार जी उठता और नहा-धोकर, खा-पीकर कुछ घूमता-फिरता, किताबें पढ़ता तथा अपने दुर्भाग्य की बातें सोचता। जब तक दुओरानी के गले में हार रहता, उतनी देर तक डालिमकुमार के शरीर में प्राण नहीं रहते। दुओरानी के हार खोलते ही फिर प्राण लौट आते।

मंत्रिपुत्र दिन में एक बार डालिमकुमार को देखने जाता था। वह प्रतिदिन डालिमकुमार के शरीर को पलंग पर पड़ा देखता लेकिन आश्चर्य, इतने दिन गुजर जाने पर भी डालिमकुमार ठीक जीवित मनुष्य की तरह ही लगता है। वह इस रहस्य को समझ नहीं सका। एक दिन उसने डालिमकुमार के महल में रात को भी रुकने का निश्चय किया।

मंत्रिपुत्र उस दिन डालिमकुमार के कमरे में छुपा बैठा रहा। जैसे रात हुई यह देखकर उसे बहुत आश्चर्य हुआ कि डालिमकुमार उठा और अपने बगीचे में घूमने लगा। यह सब देखकर मंत्रिपुत्र ने सोचा कि शायद कोई भूत-प्रेत हो पर जब उसे छूकर देखा तो उसने डालिमकुमार को अपने हृदय से लगा लिया।

डालिमकुमार ने सारी बातें मंत्रिपुत्र को बताई। वे दोनों समझ गए कि जितनी देर दुओरानी गले में हार पहने रहती है उतनी देर डालिमकुमार के शरीर में प्राण नहीं रहते। इसलिए जैसे भी हो, उस हार को वापस लेकर आना होगा।

बहुत वर्ष पहले की बात है। विधाता पुरुष की बहन ने एक सुंदर कन्या को जन्म दिया। बहन ने एक दिन अपने भाई से पूछा— ''इस कन्या के भाग्य में क्या लिखा है, बताओ तो?'' ''क्या बताऊं? मरे हुए वर के साथ इसका विवाह होगा।''

यह सुनते ही वह सकते में आ गई। लेकिन विधाता पुरुष के लिखे को तो कोई नहीं मिटा सकता था। समय बीतता गया, कन्या भी बड़ी होने लगी। मां अपनी बेटी के विवाह की सोचकर अत्यंत दुखी रहने लगी।

अपनी लड़की को इस मुसीबत से बचाने के लिए वह एक दिन चुपचाप लड़की को लेकर घर से निकल पड़ी।

चलते-चलते वह एक शाम डालिमकुमार के बगीचे वाले महल के सामने रुकी। लड़की उस समय प्यास से व्याकुल थी। मां ने लड़की से कहा— ''लगता है इस महल में कोई नहीं रहता है। तुम यहां बैठकर थोड़ा, आराम करो। मैं पानी लेकर आती हूं।'' लड़की को वहां बिठाकर मां पानी लेने चली गई। लड़की ने इधर-उधर देखा। महल के दरवाजे को धक्का दिया। दरवाजा एकदम खुल गया। लड़की ने अंदर जाकर देखा एक सुंदर बगीचा है। पर वहां कोई नहीं है। उसे डर लग रहा था। वह जल्दी-जल्दी बाहर आना चाहती थी, लेकिन तभी दरवाजा बंद हो गया। वह चुपचाप दरवाजे के पास खड़ी रही।

उसी समय डालिमकुमार भी जीवित हो उठा और बगीचे में घूमने आ निकला। अचानक उसने दरवाजे के सामने रूपवती लड़की को खड़े देखा। डालिमकुमार ने आगे बढ़कर पूछा— ''तुम कौन हो? यहां अकेली क्या कर रही हो?'' लड़की ने डालिमकुमार को बताया कि मरे वर के साथ उसका विवाह न हो इसीलिए उसकी मां उसे लेकर घर से भाग निकली है। यह सुनकर डालिमकुमार ने कहा—''कितने आश्यर्च की बात है, मैं ही तुम्हारा मरा वर हूं।''

''तुम मरे हुए कहां हो? तुम तो घूम-फिर रहे हो,'' लड़की ने कहा। डालिमकुमार ने लड़की से कहा— ''अंदर चलो मैं तुम्हें सब बताता हूं।''

लड़की डालिमकुमार के साथ कमरे में आ गई। डालिमकुमार ने उसे पीने का पानी दिया। उसी समय मंत्रिपुत्र भी वहां आ पहुंचा। उनकी सारी बातें सुनकर मंत्रिपुत्र ने कहा— ''शुभ काम में देर करने से क्या लाभ। आज रात ही यहां विवाह होना चाहिए। इस समय पंडित यहां नहीं मिल पाएगा। माला बदलकर ही तुम विवाह कर लो।''

यही हुआ। बगीचे से फूल तोड़कर माला बनाई गई। उसी रात उन दोनों ने माला बदलकर विवाह कर लिया।

दूसरे दिन जब लड़की जागी तो डालिमकुमार को पलंग पर अचेत अवस्था में पाया। वह पागलों की तरह रोने चिल्लाने लगी। बदहवास-सी चारों ओर घूमने लगी। शाम हुई, अंधेरा चारों ओर फैल गया। लड़की यह देखकर आश्चर्यचकित हो गई। डालिमकुमार बिस्तर पर बैठा है। डालिमकुमार ने बड़े प्यार से समझाते हुए कहा–

''मैंने तुम्हें बताया था कि मैं ही तुम्हारा मरा पति हूं।'' और डालिमकुमार ने अपनी आपबीती अपनी पत्नी को कह सुनाई। डालिमकुमार ने स्नान किया और बाद में दोनों ने मिलकर भर पेट खाना खाया। प्रत्येक रात की तरह मंत्रिपुत्र वहां आता और सुबह होते ही चला जाता।

इस तरह आठ साल बीत गए। इसी बीच डालिमकुमार के दो पुत्र हुए। वे भी पिता की तरह ही देखने में सुंदर थे। राजा तथा राजमहल में किसी को इस बात की जानकारी न थी।

डालिमकुमार की पत्नी को अपनी सास से मिलने की बहुत इच्छा थी। बहुत सोचने-विचारने के बाद उसे एक उपाय सूझा, जिससे वह अपनी सास से भी मिल सकती थी और मौका मिल जाने पर दुओरानी के गले से हार को भी पा सकती थी।

एक दिन डालिमकुमार की पत्नी ने दासी का रूप धरा और हाथ में एक टोकरी ले उसमें नाखून काटने के लिए एक कैंची, नहरनी, पैर साफ करने के लिए एक झामा और पैर रंगने के लिए आलता रखा और दोनों लड़कों को साथ लेकर राजमहल की ओर चल दी। पहले सुओरानी के घर गई।

दोनों लड़कों को देखकर सुओरानी आश्चर्यचकित हो गई। उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। उसने दासी से कहा– ''डालिम के चले जाने के बाद से ही साज-शृंगार मैंने छोड़ दिया है। इसलिए तुम्हें कोई काम नहीं दे सकती फिर भी दोनों लड़कों को लेकर यहां आती रहना मुझे अच्छा लगेगा।''

वहां से दासी दुओरानी के घर पहुंची। उसके हाथ-पैर के नाखून काटे। झामें से पैर साफ करके उनमें आलता लगाया। उस दिन दुओरानी खूब खुश थी। उसने दासी से कहा– ''आज से तुम मेरे यहां काम करोगी। तुम्हें रोज यहां आना पड़ेगा।''

दूसरे दिन से ही डालिमकुमार की पत्नी दासी बनकर राजमहल जाने लगी। कुछ दिन बीत जाने पर एक दिन राजमहल पहुंचने पर अपने बड़े लड़के को समझाते हुए बोली– ''देखो दुओरानी के घर में घुसते ही रोना-चिल्लाना शुरू कर देना। दुओरानी के गले से जब तक सोने का हार न मिल जाए तब तक रोते रहना।''

उस दिन दासी बर्तन में पानी भरा झामा और आलते की शीशी लेकर जैसे ही बैठी, वैसे ही बड़े लड़के ने जोरों से रोना शुरू कर दिया। दुओरानी ने पूछा– ''क्या हुआ? रोते क्यों हो?''

''सोने का हार दो, मैं खेलूंगा– लड़के ने कहा। दुओरानी ने उसे समझाते हुए कहा, ''यह नहीं मिलेगा सबसे मंहगा गहना है। मैं तुम्हें और कुछ दे देती हूं।'' ''नहीं, मुझे तो सोने का हार ही चाहिए।'' कहकर वह और जोरों से चिल्लाकर रोने लगा। बच्चे की जिद्द से हार कर दुओरानी ने सोने के हार को गले से उतारकर लड़के के हाथ में थमा दिया। दुओरानी ने लड़के को समझाते हुए कहा, ''लो, कुछ देर खेल ले इसके साथ।''

काम खत्म हो जाने के बाद जब दासी साज-सामान समेटकर जाने लगी तो दुओरानी ने उसके बच्चे से हार वापस लेना चाहा। पर बड़े लड़के ने फिर रोना शुरू कर दिया। इस पर दासी ने कहा– ''रानी जी मुझे लड़के के साथ थोड़ी देर के लिए घर जाने की आज्ञा दे दीजिए। मैं इसे खिला-पिलाकर तथा सुलाकर जल्दी ही वापस आकर आपका हार लौटा जाऊंगी।'' दासी की बात सुनकर दुओरानी ने कहा–''ठीक है ले जाओ। पर वापस जरूर दे जाना।''

हार मिलते ही डालिम की पत्नी की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। वह दौड़ती हुई बगीचे वाले महल में पहुंची, देखा डालिमकुमार उस समय बिस्तर पर बैठा था। थोड़ी देर बाद मंत्रिपुत्र भी वहां आ पहुंचा। सभी ने मिलकर यह तय किया कि अगले दिन सब मिलकर समारोह में भाग लेने राजमहल जाएंगे।

अगले दिन डालिमकुमार सजे हुए हाथी पर बैठा, दूध की तरह सफेद दो घोड़ों पर डालिमकुमार के दोनों पुत्र बैठे और जरी के पर्दे से ढकी पालकी में डालिमकुमार की पत्नी बैठी।

मंत्रिपुत्र ने राजा के पास डालिमकुमार के जीवित होने की खबर भेजी तथा यह संदेश भी भिजवाया कि डालिमकुमार अपनी पत्नी और पुत्रों के साथ माता-पिता से मिलने आ रहा है।

पहले तो राजा और सुओरानी को विश्वास ही नहीं हुआ। लेकिन ढोल-बाजे के साथ डालिमकुमार को अपने बेटों और पत्नी के साथ राजमहल के सिंह द्वार पर पहुंचते हुए देखा तो राजा और सुओरानी की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। सारे राज्य में आनंद ही आनंद छा गया। उधर दुओरानी परेशान थी। उस तक भी डालिमकुमार के जीवित होने की खबर पहुंच चुकी थी। बहुत डर रही थी कि अब उसका क्या होगा।

डालिमकुमार ने अपनी मृत्यु के सारे रहस्य राजा को कह सुनाए। यह सुनकर राजा आग बबूला हो गया, उसने तुरंत दुओरानी को एक गड्ढे में गाढ़ने का हुक्म दे दिया। इसके बाद राजा, डालिमकुमार के साथ सुख के दिन बिताने लगा।

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

ISBN : 81-230 : 0509-1
मूल्य : 20 रुपये